* श्रीः *

* श्रीराधारहस्यप्रकाशिका *

नमः कृष्णाय हंसाय निम्बार्काय निरुद्धतः । आचार्याय चतुर्व्यूहपारम्पर्यप्रवर्तिने ॥ १ ॥ पूर्वाचार्यानहं वन्दे सखीरूपधरान् स्वकान् । लिहतोऽप्युज्ज्वलरसं रसान्तरप्रवर्त्तकान् ॥ २ ॥ एवं परम्पराप्राप्तान् गुप्तभक्तप्रभेदकान् । नमस्करोमि तान् सर्वान् प्रणिपत्य कृताञ्जलिः ॥ ३ ॥ श्रीभट्टञ्च हितरूपां हरिव्यासं हरिप्रियाम् । गोपालिकां गुरुरूपां वन्देऽहं दृढभक्तितः ॥४॥ श्रीराधा यत्र कृष्णोऽस्ति राधायां कृष्ण एव च ॥ उभाभ्यामेकरूपाभ्यां प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥५॥ यत्नेन हंसदासेन राधापादाम्बुजाश्रयात् । राधिकाया रहस्यञ्च प्रादुर्भूतं रसास्पदम् ॥ ६ ॥ स्वीयाचार्यप्रमाणेन रसिकानां प्रसादतः ॥ मयेदं संगृहीतं वै रसिकानां विनोदकृत ॥ ७ ॥

भाषा—चौपाई ।

राधा[1]चरणकमल सुखदाई । हरिपदछबिजिनकरिअधिकाई ।१॥
जे पद वृन्दाविपिन विलासी । क्रीडत रास महासुखरासी ॥२॥
गोपीदृग भ्रमरी जिन्हें सेवैं । श्रुति दासी ह्वै हिरदय लेवैं ॥३॥
सखीरूप धरि सेवत जे पद । शिव सनकादिक शुकमुनि नारद ४
श्रीरँगदेवीके अनुजाई । जिन्हें सेय सुभगता पाई ॥५॥
श्रीभट श्रीहितुरूपा नाम । हरिव्यास हरिप्रिया अभिराम ॥६॥
गोपालिका सखी जेहि नाम । स्वामिनगुरु मेरी सुखधाम ॥७॥
वे पद मेरे हियमें धेरे । धीजिय हियमें गहैं अरे ॥८॥
उन पद यश गाऊं अभिलाषा । रोके रुकी न उमगी आसा ॥९॥
कविता नहीं नहीं पंडिताई । कैस तरिये आशा माई ॥१०॥

---

१ श्रीभागवते दशमस्कन्धे—ताभिर्विधूतशोकाभिरिति, विरोचताधिकं तात पुरुषः इति.

पूर्व रसिकनने माँगि मधुकरी। अपने ग्रन्थकी झोरी भरी ॥११॥
श्रुति पुरान भागवत समेता। काव्य नाट्य रस ग्रन्थक जेता ॥१२
सबके हैं उदाहरण यामें। क्रमतं प्रेमकी सीढ़ी तामें ॥१३॥
हरि राधामें रति जिनकेरी। तिनको है सम्पत्ति की ढेरी ॥१४॥
जाति यवन रसखान वजीद। या रसमें वेऊ भये सहीद ॥१५॥
हरिदास जो भौंह मरोरै। ताकी समता कौन टटोरै ॥१६॥
'राधारहस्यप्रकाशिका' नाम। ग्रन्थ भयो सुन्दर अभिराम।१७।
सो मन बसी सोई मैं गाई। क्षमा करौ सब मोर ढिठाई ॥१८॥

॥ श्रीः ॥

श्रीराधारहस्यप्रकाशिका

JAIPUR

रहस्ये क्रीडनं वीक्ष्य श्रुत्वा च पार्वतीरितम् ॥ वेशात्मानं वञ्चयित्वा शिवो गोपीश्वरोऽभवत् ॥ १ ॥ महाकौर्मे-अग्निपुत्रा महात्मानस्तपसा स्त्रीत्वमापिरे ॥ भर्तारं च जगद्योनिं वासुदेवमजं विभुम ।२। सुधर्माध्वबोधे-मुनयो ह्यभवन् गोप्यः शृङ्गाररसलीदये ॥ कुमारास्तत्र विख्याता भगवाच्छिष्यशेखराः ॥ ३ ॥ हरिणी हारिणी हीणा हरितेत्याह्वयान्तरैः ॥ देवर्षयश्च विख्याताः कुमारशिष्यशेखराः ॥४॥ मुग्धा स्निग्धा विदग्धा चासंदिग्धा चेति संज्ञया ॥ पार्षदाश्चैव विख्याता देवर्षिशिष्यशेखराः ॥ ५ ॥ राधिकावामपार्श्वस्था रंगदेवीति संज्ञया ॥ योगेशाश्चैव विख्याता पार्षदशिष्यशेखराः ॥६॥ सुदेवी चैव चित्रेति मुख्यसखीषु कीर्त्यते ॥ सख्यश्च कोटिशस्तासां शिष्यप्रशिष्यकादयः ॥ ७ ॥

भाषा—श्रीकृष्ण को एकान्त श्रीवृन्दावन में रासक्रीड़ा करते देखके और श्रीपार्वती के वचन सुनके अपनो वेश बदल के श्रीमहादेवजी गोपी होते भये सो गोपेश्वर प्रसिद्ध हैं ॥ १ ॥ कूर्मपुराण में—अग्निके पुत्र महात्मा तप करके स्त्री भये जगत् के कारण वासुदेव अजन्मा विभुको भर्तार मानतेभये ॥ २ ॥ सुधर्माध्वबोधमें—श्रीहंस भगवान् के श्रेष्ठ शिष्य श्रीसनकादिक मुनि शृङ्गार रस आस्वादन करने के अर्थ गोपी होते भये ॥ ३ ॥ हरिणी हारिणी हरिता हीणा ये नाम हैं श्रीनारदजी भी अपने पार्षदों सहित सनकादिकनके मुख्य शिष्य मुग्धा स्निग्धा विदग्धा असंदिग्धा ये चार नाम से सखीरूप श्रीराधा के निकट बिराजे हैं ॥ श्रीराधाके वामभाग में निकट ही श्रीरंगदेवी नामकी सखी नारदजीके श्रेष्ठ शिष्य श्रीनिम्बार्क भगवान् विराजैं हैं॥ ४-६ ॥ श्रीनिवासाचार्य योगेश सुदेवी, चित्रा नामकी मुख्य सखी विराजै हैं। उनके शिष्य प्रशिष्य रूपसे कोटिन सखी हैं ॥ ७ ॥

शृङ्गाररसरूपां तां मुनिरूपसुदुर्लभाम् । प्रवर्तयितुकामा वै सखीरूपान्तरं भृतः ।८। भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमा ॥ भक्तिः प्रवर्तिता लोके मुनीनामपि दुर्लभेति वचनात् ॥९॥ कृष्णो हंसोऽनिरुद्धो निम्बार्कश्चेति चतुष्टयम् ॥ आद्याचार्या विदुः सन्तस्तच्छिष्या गोपिका मताः ॥ निम्बार्का गोपिकास्तस्मान्निम्बार्केति सुसङ्गताः ॥ १० ॥ कुमारा मुनिरूपेण कलिलुप्तं कृते कृते ॥ विशदयन्ति शान्तं ते सख्यात्मनोज्ज्वलं सदा ॥ ११ ॥ त्रेतायां तथा त्रेतायां दास्यं देवर्षयो रसम् ॥ प्रवर्त्तयन्ति ते नित्यं लिहन्ति रसमुज्ज्वलम् ॥१२॥ द्वापरे द्वापरे तद्वद्वात्सल्यं चैव पार्षदाः ॥ रंगदेवीस्वरूपेण सदोज्ज्वलरसंलिहः ॥ १३ ॥ योगेशाः प्रवर्त्यन्ते सख्यरसं कलौ युगे ॥ सुदेवी चित्रकाकारैः सदोज्ज्वलरसंलिहः ॥१४॥

शृंगार रसको सखीरूप मुनिनकों भी दुर्लभ है ताके प्रवर्त करवेकों सखीरूप धारण करते भये ॥ ८ ॥ श्रीमद्भागवत में लिख्यो है—उद्धवजी ने गोपिन से कह्योकि महान् उत्तम जो तुम सो तुमने उत्तमश्लोक भगवान् में उत्तमा भक्ति प्रवर्त करी सो मुनिनको भी दुर्लभ है ॥ ९ ॥ श्रीकृष्ण हंस अनिरुद्ध निम्बार्क ये चार आचार्य आदि सब सन्त जानै हैं तिनकी शिष्य सब गोपी हैं श्रीरंगदेवीजी जो निम्बार्क तिनकी शिष्य निम्बार्की गोपी हैं निम्बार्की यह कथनमात्र है ॥ १० ॥ मुनि श्रीसनकादिक सखीरूपसे उज्ज्वलरस सेवन करते भी जब जब सत्ययुग आवै है तब तब कलि करके शान्त रस जो लुप्त भयो ताकों प्रवर्त्त करैं हैं ॥११॥ नारदजी नित्य उज्ज्वल रस सेवन करते भी जब जब त्रेता आवै तब मखयजनरूप दास्यरस प्रवर्त करैं हैं ॥ १२ ॥ तैसे ही द्वापर जब जब आवै श्रीरंगदेवी उज्ज्वल रस सेवन करते भी निम्बार्करूपसे प्रतिमा अर्चनरूप वात्सल्यरस प्रवर्त करैं हैं ॥ १३ ॥ श्रीनिवास योगेश सुदेवी चित्रकाकारसे उज्ज्वल रस सेवन करते भी कालिमें विश्वासरूप से नामसंकीर्तनादि सख्यरस प्रवर्त करैं हैं ॥ १४ ॥

असंख्यकल्पजीवित्वाश्चतुर्युगाधिकारिणाम् । युगे युगेऽधिकारं स्वं साधयन्तः समाहिताः ॥ १५ ॥ सखीरूपधरा नित्यमास्वादयन्ति चोज्ज्वलम् । पारम्पर्यानुवृत्यैव यथाधिकारमात्मनः ॥ १६ ॥ रसान्तरं भजेद्बाह्यं भावैस्तु रसमुज्ज्वलम् । कृष्णहंसानिरुद्धाख्यं निम्बार्कं प्रणिपत्य तम् । यस्य लाभाय पर्येमि सपरिकरभावनाम् ॥ १७ ॥ एतावान् योग आदिष्टो मच्छिष्यैः सनकादिभिः । सर्वतो मन आकृष्य मय्यद्धावेश्यते यथा ॥ १८ ॥ भक्तियोगः प्रकर्त्तव्यो ध्यानैकसाध्य आत्मनि । आद्याचार्यं हरिं तस्मात्सपरिकरमास्मरेत् ॥ १९ ॥ तत्रापि मानस्यर्चायां विरक्तश्च सखी भव । अधिकारी नापरस्तु विचार्यतामिति स्वयम् ॥ २० ॥

असंख्य कल्प पर्यन्त जीवन है. चारों युगमें अधिकारी युग युगमें अपने अधिकार को धर्म सावधान होके प्रवर्त्त करैं हैं और सखीरूप से नित्य उज्ज्वल रस सेवन करैं हैं । परंपरा की अनुवृत्ति करके जैसो आत्मा को अधिकार होय और रसों कों बाहिर से भजैं और भाव कर के तो उज्ज्वल ही सेवन करैं ॥ १५–१६ ॥ श्रीकृष्ण हंस अनिरुद्ध निम्बार्क इनकों दण्डवत् करके जाकी लाभ के अर्थ सहित परिकरकी भावना को मैं प्राप्त होऊं ॥ १७ ॥ श्रीमद्भागवत में कह्यो कि मो कृष्ण के चेला सनकादिकन ने इतनो ही योग अपने शिष्यों को उपदेश कियो कि सब ओर से मन खैंचकै साक्षात् मोमें लगावै ॥ १८ ॥ यथावत् लक्षण के अर्थ कृष्ण हंस अनिरुद्ध निम्बार्क आचार्य सूचन किये । भक्तियोग जो मन के विषय करै तो ताको साधन ध्यान है, तासे आद्याचार्य हरिको परिकर–सहित स्मरण करै ॥ १९ ॥ तामैं भी मानसी अर्चा की भावना जो विरक्त करै तो तू सखी हो । सखीभाव बिना और अधिकारी नहीं है स्वयं विचार लेव ॥ २० ॥

यामले कृष्णस्तथा—युग्मपूजाधिकारी स्यात्सखीभावार्थनिःस्पृहः ॥ २१ ॥ कुमाराः—ध्यानाऽधिकारोऽशक्तस्य सर्वेषां तु च सर्वतः । राधाकृष्णपूजने वै सखीभावो हि सर्वकृत ॥ २२ ॥ नारदः—विधित्सेत सर्वसेवामुभयोः कृष्णराधयोः । भवेत्सखीभावनो हि सर्वकर्मणि स प्रभुः ॥२३॥ भावयेदिह आसीनः श्रीकृष्णं भावयवाहितः राधाकृष्णान्तसेवायामात्मानमधिकारिणम् ॥ २४ ॥ संभूय युवतीभावो भावनयैव मानसे । श्रीमत्योः कृष्णराधयोः परमं धाम चिन्तयेव ॥ २५ ॥ कुमाराणां सखीतनुप्राप्तिः कालिकातन्त्रके—जटिलोऽर्कुर्जजपूको धृताशीरित्याह्वान्तरैः । मानसाः कल्पत्रयान्ते ब्रह्मस्तप्त्वा व्रजे तपः । मुनयः कृष्णपार्श्वस्था आसुः सखीवपुर्धराः ॥ २६ ॥ संमोहनतन्त्रे च—जटिलो जजपूकश्च धृताशीरर्कुरेव च । चत्वारो मुनयो धन्या इहामुत्रार्थनिःस्पृहाः २७

यामल में श्रीकृष्ण ने कह्यो कि—युगलपूजा को अधिकारी सब अर्थ से निर्चाह सखीभाव से होय ॥ २१ ॥ कुमारनके वाक्य हैं—जीवको ध्यान में अधिकार नहीं ऐसे अशक्त सब भक्तों को सब ओर से राधाकृष्ण की पूजन में सखीभाव ही सब करबेवालो है ॥ २२ ॥ नारदजी ने भी कह्यो दोनों राधाकृष्ण की सब सेवा करै पर सखीभाववारो ही सब काम करिबे कों समर्थ है ॥ २३ ॥ श्रीकृष्ण की भावना करनेवालो सावधान हो कै एकान्त में वैठिके श्रीराधाकृष्ण के निकट सेवाके विषय आत्मा को अधिकार भावना करै ॥ २४ ॥ फिर मानसमें भावना करके युवतीभावसे दोनों राधाकृष्णको स्वरूप चिन्तवन करै ॥ २५ ॥ कुमारन की सखीतनु की प्राप्ति कालिकातन्त्र में लिखी है—जटिल, अर्कु, जजपूक और धृताशीः ये हैं दूसरे नाम जिन के, ब्रह्माके मन से प्रगटे व्रज में तप करके सखीरूप से कृष्ण के निकट विराजै हैं ॥ २६ ॥

केवलेनैव भावेन प्रपन्ना वल्लवीपतिम् । तपुस्ते सलिले मग्ना जपुश्च मनुमुत्तमम् ॥ २८ ॥ रमात्रयेण पुटितं स्मराद्यन्तं दशाक्षरम् । दध्युश्च गाढभावेन वल्लवीभिर्वने वने ॥ २९ ॥ भ्रमन्तं नृत्यगीताद्यैर्मानयन्तं मनोभवम् । कल्पत्रयान्ते ते जाता गोकुले शुभलक्षणाः ॥ ३० ॥ इमास्ताः पुरतो रम्या उपविष्टा नतभ्रुवः । वृन्दायूथे हि भावयेन्नारदं च सखीतनुम् ॥ ३१ ॥ गौतमागमे—यथा निगमरम्यद्धा नारदः कृष्णलालसः । हृद्यादर्शलालसायुक्तो योषित्वं गोकुले गतः ॥ ३२ ॥ पित्रा शप्त उदासीनः परिभ्रमन् महीतले । दर्शयित्वात्मानं योऽज्ञः स्वीकृता कृपया तया ॥ ३३ ॥

संमोहन तन्त्र में—जटिल, जंजपूक, घृताशी, अर्कु ये चारों मुनि धन्य हैं या लोक परलोक में निःस्पृह केवल भाव करके वल्लवीपति के प्रपन्न, जलमें तप करते भये और उत्तम मन्त्र जपते भये। रमाबीज तीन करके संपुटित स्मरादि ताके अन्त में ऐसो दशाक्षर मन्त्र जपके गाढ-भाव से वल्लवीन के पति तिन के साथ जो वन वन में भ्रमै नृत्य गीतादिकन से मनोभव को मानै तिनको ध्यान करते भये ऐसे श्रीकृष्ण को ध्यान कर तीन कल्पके अन्त में वे शुभ-लक्षण गोकुल में प्रगट भये । श्रीकृष्ण के सामने सुन्दर भौंह नीची किये विराजै हैं ॥ वृन्दा के यूथमें नारदजी की सखीमूर्ति ध्यान करै ॥ २७—३१ ॥

सोई गौतम आगम में—नारदजी कृष्ण मिलन की लालसा में सुन्दर हृदय की अभिलाषा से गोकुल में स्त्री भये ॥ ३२ ॥ पिता जो ब्रह्मा तिननै शाप दिये उदासीन पृथ्वी पर डोलते रहैं । वृन्दाजी कृपा करके अनायास दर्शन देके स्वीकार करलेती भयीं ॥ ३३ ॥

नारदस्य सख्यात्मता श्रूयते च तथागमे वृन्दयानुगृहीतोऽस्मि पित्रा शप्तः परिभ्रमन् ॥ ३४ ॥ तदनुगतिमाश्रित्य मुग्धाति विश्रुता सखी रंगदेवी तनुश्चाख्या तावता तपसाभवत् ॥ ३५ ॥

श्रीनारदजी को सखी होनो आगम में भी सुन्यो जाय है—नारदजी ने कह्यो पिता के शाप से भ्रमौं जो मैं सो वृन्दाजी ने मोपर कृपा करी उनकी अनुगति से मेरो नाम मुग्धा भयो । श्रीसनकादिकन के सखीभाव में जो सन्देह करै ताकों समुझनो चाहिये कि शृङ्गार रस सब रसन में श्रेष्ठ है यह सब आचार्यों को सम्मत है । सखीभाव सो है जाके कामविकार न होय श्रीकृष्णके साथ भी सम्भोग तो का चलै चेष्टा संकल्पमें भी न होय केवल श्रीराधाकृष्ण की क्रीडादर्शन परिचर्या में तत्पर रहै सो निर्विकारता सनकादिकनकी प्रसिद्ध ही है । कहूं जो कामसाधनसाध्य प्रेम शृङ्गाररस वारिनको लिख्यो है सो काम कृष्णस्वरूपसे बढ्यो श्रीकृष्ण ने बढायो सो भी उनके सुखमात्रके तात्पर्यवारो है । साक्षात् मन्मथको मन मथन करवेवाले श्रीकृष्ण, कोटिकाम लावण्य उनकी प्रिया तिनके अङ्गमें इन्द्र के भृत्य प्राकृत कामको प्रवेश कहां है । श्रीसनकादिक नारदजी से विशेष अधिकारी कौन होयगो । गोपिन के दृढ महाभाव आदिके जो ये अधिकारी न होयंगे तो और कौन है । सनकादिसंहिता में सम्प्रदायी आचार्यों की वाणी में इनके सखीरूप लिखे हैं । विष्णुपुराण में लिख्यो है कि यह वासुदेव ही साक्षात् पुरुष है । और ब्रह्मा सें लेकैं

१–विष्णुपुराणे 'स एव वासुदेवोऽयं साक्षात्पुरुष उच्यते । स्त्रीप्रायमितरत् सर्वं जगद् ब्रह्मपुरः सरम् ॥' इति.

यथा संमोहनतन्त्रे ह्येतदर्थत्रयं क्रमात् । हविर्धानाभिधानस्तु चक्रमासीन्महामुनिः ॥३६॥ सोऽतप्यत तपः कष्टं निम्बकाथैकभोजनः । आशुसिद्धिकरं मन्त्रं विंशार्णं च जप्तवान् ॥ ३७ ॥ अनन्तरं मारबीजादग्न्यारूढं तदेव तु । मायातः परितो व्योम हंसासकृपुष्टिचित्रकम् ॥ ३८ ॥ ततो दशाक्षरं पश्चान्नमोयुक्तस्मरादिकम् । दध्यौ वृन्दावने रम्ये माधवीमण्डपे प्रभुम् ॥ ३९ ॥ उत्तानशायिनं चारुपल्लवास्तरणोपरि । कयाचिदतिप्रेमान्धवल्लव्या रक्तनेत्रया ॥४०॥ वक्षोजयुग्मेनाहत्य विपुलोरःस्थलं मुहुः । स मुनिः सुबहून् देहांस्त्यक्त्वा कल्पत्रयात्परम् ॥ ४१ ॥ सारङ्गनाम्नो गोपस्य कन्याभूच्छुभलक्षणा । रङ्गदेवीति विख्याता निपुणा चित्रकर्मणि यस्या दन्तेषु दृश्यन्ते चित्रा अरुणाविन्दवः ॥ ४२ ॥ श्रीनिवासः सुदेवोति ॥ ४३ ॥

सब जगत् को सखीपनो है। जो कोई कहै कि ये तादृश प्रेम के अधिकारी नहीं तो हंस भगवानने केवल सांख्य-उपदेश कियो, सो नहीं तुमारे को धर्म कहिबे कों साक्षात् यज्ञपुरुष भगवान् मैं आयो हूं इन वचन से (धर्म मेरी भक्ति करनी है) तासे भक्ति भी उदेश करी ॥ पञ्चरसात्मिका श्रीमद्भागवत सनकादिकनने शेषजी से सुनी और श्रीनारदजी को सुनाई यह प्रसिद्ध है। हरिशरण यह नाम निरन्तर रसनापर विराजै वैकुंठ में नारायणदर्शन से जो सात्विक उदय भये और पांच रस हरिचरणकी तुलसी सौरभ से जैसे इनके हृदयमें आये सो आगे कहेंगे इनके प्रेम और आचार्यताकी महिमा 'रत्नाञ्जलि' की भाषामें वर्णन करी है। नारदजी की योग्यता प्रगट विख्यात है। श्रीनिम्बार्क भगवान् को सखीपनो तैसे तप से जानो 'संमोहनतन्त्र' में यह अर्थत्रय क्रमकरके है—'हविर्धान' नाम के चक्र महामुनि नींबकी छाल खाय के तप करते भये शीघ्र ही सिद्ध करवेवालो मन्त्र बीस अक्षरको जपैं, ताके

यथा गोतमीयतन्त्रे—यत्र यत्र स्थितिर्यस्य राधाकृष्णावलोकने। तत्र तत्र सुखे स्थित्वा दासी भूत्वावलोकयेत् ॥ ४४ ॥ देवाद्दक्षिणतः पूर्वं स्वगुरुं स्थापयेत्सुधीः। राधाकृष्णात्मकं श्रीमान् राधाकृष्णस्वरूपिणम् ॥ ४५ ॥ प्रेमतत्त्वमयं सुष्ठु हेयरागविवर्जितम्। सखीरूपधरं ध्यात्वा गुरुं पीठेऽवलोकयेत् ॥ ४६ ॥ (*)

पीछे काम बीज अग्नि आरूढ को जप्यो। मायातें परे व्योम जो हंसासृक्पुष्टिचित्रक है तासे परे दशाक्षरको मन्त्र नमः—युक्त स्मरादिक जपते भये। श्रीवृन्दावनके माधवीमण्डप में सुन्दर कोमल पल्लव के बिस्तरपर उत्तान सोवैं जो प्रभु तिनको ध्यान करते भये कोई अति प्रेमकी आंधी वल्लवी रक्त नेत्रवारी ताके वक्षोजयुग्म से वक्षःस्थल मिलाय रहे बारंबार सो भी ध्यान कियो। सो मुनि बहुत देहन को त्याग करके तीन कल्प के अन्त में सारंग नाम गोपके घरमें श्रीरंगदेवी नामकी कन्या होते भये। चित्रके कर्ममें बडी निपुण जिनके दांतनमें चित्र लाल बिन्दु दरसैं हैं। बहुत देहनको त्याग करनो अर्थात् भूमि वैकुण्ठमें निम्बादित्य चक्ररूपसे स्थापन करनो, तत्व यह है कि अवतारी श्रीसुदर्शन हैं, निम्बादित्य अवतार हैं, रंगदेवी आकृति हैं, चक्र ताप तिनके प्रतिबिम्ब हैं, ॥ ३४—४२ पर्यन्त ॥ श्रीनिवास सुदेवी हैं ॥ ४३ ॥

गौतमीय तन्त्र में कह्यो है कि राधाकृष्णके दर्शनको जाकी जहां जहां स्थिति होय तहां तहां ठाढे होके सुखपूर्वक दासी होके दर्शन करै ॥ ४४ ॥ सुबुद्धि पहिले भगवानके दाहिने अपने गुरु राधाकृष्णात्मक राधाकृष्णस्वरूप को स्थापन करै गुरु प्रेमतत्वमय राग द्वेष जिनके नहीं ऐसे सखीरूप को ध्यान करके योगपीठपर देखै ॥ ४५—४६ ॥

अथ रसानां निष्पत्तिः ।

(श्रीमद्भागवते तृतीयस्कन्धे)

तस्यारविन्दनयनस्य पदारविन्दकिञ्जल्कमिश्रतुलसीमकरन्दवायुः ।
अन्तर्गतः स्वविवरेण चकार तेषां संक्षोभमक्षरजुषामपि चित्ततन्वोः । ५० ।

व्याख्या—कृष्णस्य दक्षिणे पादेऽङ्गुष्ठे मूलतलेऽङ्किते । रेखात्मकाऽरविन्दस्था तुलसी हरिवद्रमः ॥ ५१ ॥

उनकी कृपासे आप सखीरूप होय गुरुकी आज्ञा से बुद्धिमान सखीरूपसे मण्डलमें प्रवेश होय ॥ ४७ ॥ या ध्येयमण्डलमें प्रवेश होवेको याके सिवाय और साधन नहीं है तासें या पदकी प्राप्ति की चाहनावारेकों गुरुसेवा ही मुख्य है ॥ ४८ ॥ ऐसी दीक्षा बिना गुरुकी प्रसन्नता बिना या प्रकारके धर्म बिना या प्रकार को कैसे होय अर्थात् सखीरूप कैसे होय ॥ ४९ ॥ श्रीसनकादिकनके हृदयमें पहिले पांच रस आये उनको अपने और शिष्यन के द्वारा युग युगमें प्रवर्त करैं और सखीरूप से उज्ज्वल रस सेवन करैं ॥

रसको प्रागट्य ।

सनकादिक वैकुण्ठ में गये । श्रीनारायण कमलनयन के चरणकमलके पराग की मिलीभयी तुलसीमकरन्दवायु अपने विवर अर्थात् नासिका द्वारा सनकादिकनके अन्तर हृदयमें गयी । अक्षरसेवी अर्थात् निर्गुणमें निष्ठावारिन के चित्त और शरीरको क्षोभ करती भयी । आठों सात्विक प्रगट होते भये ॥ ५० ॥

व्याख्या (भाषा)—श्रीकृष्णके दाहिने चरणके अंगूठा के मूलमें कमल की रेखा तामें चढी तुलसी हरिकी तरह रसरूप है ॥ ५१ ॥

दैन्येन स्तनरागाभ्यां लालयन्तीश्वरं पतिम् । सापत्न्येन सपत्नीं स्वां महर्षे कमलालये ॥ ५२ ॥ कुङ्कुमं कञ्जसंश्लिष्टं किञ्जल्कत्वेन संस्थितम् । पत्स्तनरागसापत्न्यैर्मिश्रं यत्तुलसीमधु । तद्वायुपञ्चमस्तत्र गन्धवाड्रससंग्रहः ॥ ५३ ॥ तत्र ज्ञानैकगम्यत्वात्पदः संसर्गतो रसः । ज्ञानैकगम्यविज्ञानं भिन्नवच्छान्तमन्वभूत् ॥ ५४ ॥ दैन्यानुवर्तितत्वेन कुचस्य पादजोपणे । संसर्गेण रसो यश्च दैन्यैकसाध्यदास्यता ॥ ५५ ॥ किञ्जल्कत्वोत्मेदितस्य कुङ्कुमस्य पदाब्जके । संलालनस्वरूपत्वात्कृपानुभावतास्य च ॥ ५६ ॥ संसर्गेण रसस्येतो रंगस्य लालनात्मनः । कृपैकसाध्यवात्सल्यतया स्वादो विभिद्यते ॥ ५७ ॥ हरेर्वृन्दा प्रियास्तीत्याश्वासजन्यतयास्य च ॥ सापत्न्यस्यसमेऽङ्गित्वात् संसर्गाच्च रसस्य तु ॥ विश्वाससाध्यसख्यत्वेनास्वादोऽभिद्यताङ्गवत् ॥ ५८ ॥

दैन्य से लक्ष्मीजी ने चरण स्तनपर धरे और फिर कुचकुंकुम से चरण को लालन कियो वांहीं कमल स्थान में सपत्नी लक्ष्मीके साथ तुलसी सख्यसे रहे ॥ ५२ ॥ कुंकुम कमल से मिल्यो सो किंजल्क है । चरण, स्तन, राग (कुंकुम) सपत्नी इनसे मिली तुलसी ताकी वायु पांच रसकी भरी है ॥ ५३ ॥ तामें चरण ज्ञानसे जानो जाय है, सो चरणकी सुगन्धि जो तुलसी में मिलके सनकादिकनके हृदयमें पहुंची । सो शान्त रस अनुभव करावती भयी ॥ ५४ ॥ लक्ष्मीजीने दास्यताके दैन्यसे चरण स्तनपर धरे सो स्तनकी सुगन्धिने दास्यरस अनुभव करायो ॥ ५५ ॥ कुचकुंकुम से चरण लालन कियो, कुंकुम की सुगंध सोई किंजल्कलालनरूप कृपा ताके संसर्ग से वात्सल्य रसको स्वाद भेद पावतो भयो ॥ ५६–५७ ॥ वृन्दा हरिकी प्यारी है ताके आश्वास से और सपत्नी लक्ष्मी ताके संग विराजवे से विश्वास करके साध्य सख्यरस अनुभव होतो भयो ॥ ५८ ॥

तुलसीगन्धहारित्वात् कामाक्तस्य नभस्वतः ॥ संसर्गेण रसस्यात्र कामेक्षु- ग्योज्ज्वलता पृथक् ॥५९॥ इत्यङ्घ्रिकुचकुङ्कुमसापत्न्यवायवः क्रमात् ॥ शान्तादिकरसानां ते निदानं पञ्चकस्य ह ॥ ६० ॥ तुलसीभक्तिरेवात्र श्रुत्युक्तरसरूपिणी ॥ वृन्दाभक्तिः प्रियाशक्तिः सर्वजन्तुप्रकाशिनी इति श्रुतेः ॥ ६१ ॥

अथ श्रीनिम्बादित्यश्लोकसहितश्रीहरिव्यासदेवस्य रत्नांजिलिटीका-

---

तुलसी की सुगंधि ताकी उडावनवारी कामभरी वायु सो सनकादिकन के हृदयमें पहुंची तो उज्ज्वल रस अनुभव करावती भयी ॥ ५९ ॥ या प्रकार चरण कुचकुंकुम सापत्न्य वायु इनसे क्रमकरके शान्तादिक पांच रसनको वीज सनकादिकन के हृदयमें आयके शिष्यन के द्वारा प्रगट भयो। श्रुति की उक्तिसे तुलसी ही रसरूपिणी भक्ति है। वृन्दाभक्ति प्यारी शक्ति सब जन्तुकी प्रकाशकरने वारी है यह श्रुति है। ये आचार्य चारों युग में चार रस प्रवर्त्तकरैं। उज्ज्वल सब सेवन करैं। कोई या शृंगार रसमें प्राकृतपनो मिलाय के घृणा करैं हैं उनकी अज्ञानता है। श्रीभागवत में राग अनुराग पर्यन्त दास्य सख्य वात्सल्यवारे राखे। पटरानी महाभाव उन्मुखपर्यन्त राखी। महाभागवत शिरोमणि उद्धवजी रूढ महाभाववारी गोपिनकी चरणरज चाहते भये। जैसे जहाज जलमें अपने रस्ता पर चलोजाय तो औरपासकी नौका सब कम्पायमान होजाय तैसे एक रूढभाववारी के आगे सब रसवारे चकित होजायं। शुकदेवजी नंगे परमहंस जो रासपंचाध्यायी को वर्णन करैं जाकी फलस्तुति परा भक्ति के देवेवारी काम रोग जल्दी दूर करवेवारी सो प्राकृत कैसे होय ६१

व्याख्या—तत्रोपास्यविशिष्टेष्टदेवतायुगुलस्वरूपमनुस्मरति—

अङ्गे तु वामे वृषभानुजां मुदा विराजमानामनुरूपसौभगाम् ।
सखीसहस्रैः परिसेवितां सदा स्मरेम देवीं सकलेष्टकामदाम् ॥

अनन्तानवद्यकल्याणगुणगणस्य श्रीकृष्णस्य वामाङ्गे श्रीवृषभानुनन्दिनीं वयं स्मरेम, इत्यन्वयः। कीदृशीं 'सकलेष्टकामदाम्' अभीष्टफलदां 'देवीं' द्योतमानां सखीगणैः सेवनस्थानस्थिताभिः परमयूथेश्वरीभिः श्रीललितारंगदेव्यादिभिः 'परिसेवितां' सर्वतः सेव्यमानां अतश्चाधिकतरं 'विराजमानाम्' 'अनुरूपसौभगाम्, इति अनुरूपं सौभगं यस्याः ताम्। यथोक्तं श्रीभागवते—तां रूपिणीं श्रियमनन्यगतिं निरीक्ष्य या लीलया धृततनोरनुरूपरूपां प्रीतः स्मयन्नलककुण्डलनिष्ककण्ठवक्त्रोल्लसित्स्मितसुधां हरिराबभाषे" इति ॥

यहां पर्यंत आचार्यों के सखीरूप और रस प्रवर्त्त करवेकी व्याख्या भयी अब श्रीराधिकाजी के स्वरूप की व्याख्या आरम्भ करैं हैं तामें पहिले श्रीमन्निम्बार्क भगवान के श्लोकसहित श्रीयुत हरिव्यासदेवजी की 'रत्नांजलि' टीका की व्याख्या सोई कहैं—उपास्य जो श्रीकृष्ण सोई इष्टदेवता तिनको युगलस्वरूप श्रीराधा तिनको हम निरन्तर स्मरण करैं हैं। समस्त दोष करके रहित अनन्त कल्याण गुणके समूह जो श्रीकृष्ण तिनके वायें अंगमें श्रीवृषभानुनन्दिनी को हम स्मरण करैं हैं अर्थात् ध्यान करैं हैं। वे श्रीराधा सकलइष्ट मनोरथ की दाता हैं। और देवी अर्थात् प्रकाशमाना हैं। सहस्रनाम अपरिमित असंख्यात सखीन के समूह अपने अपने सेवाके स्थान में स्थित परम यूथनकी ईश्वरी श्रीललिता रंगदेवी आदिक वे चारों ओर से सेवाकरैं हैं तासे अधिकतर विराजमान हैं। और श्रीकृष्णके अनुरूप अर्थात् बराबर है सौभग जिनको सोई श्रीभागवतमें कह्यो है—हरिभगवान तारूपिणी श्री अनन्यगतिको

अत्रायमाशयः अनपायिनी भगवती श्रीः साक्षादात्मनो हरेरिति श्री-भागवतोक्तेः श्रियो नित्याविनाभावसंबन्धः सर्वसंमतः । तत्र श्रियो द्वे रूपे श्रीश्च-लक्ष्मीश्चेति । तथाहि श्रुतिः—श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे इति ॥ गन्ध-द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ॥ ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपाह्वये श्रियमिति ॥ तत्र या श्रीः सा वृषभानोस्तनया या च लक्ष्मीः सा रुक्मिण्यादिरूपा ॥ देवत्वे देवदेहेयं मानुषत्वे च मानुषी ॥ विष्णोर्देहानुरूपां च करोत्येवात्मन-स्तनुमिति वैष्णवोक्तेः ॥ १ ॥ यां यां तनुमुपादत्ते भगवान् हरिरीश्वरः ॥ तां तां श्रीरप्यवशेन भगवतोऽनपायिनीति श्रीनारदोक्तेश्च ॥ २ ॥

देख के जो लीला ही करके श्रीकृष्णके अनुरूप रूप धारण करैं प्रीतिसे मुसक्याती भयी अलकावलि मुखपर पड़ी कंठमें धुकधुकी मुख मंद मुसक्यान की सुधा से शोभायमान तिनसे बोले । आशय यह है कि भगवती श्री अनपायनी हरिआत्माकी हैं यह भागवत में लिख्यो है । श्री को हरिको नित्यभाव संबंध सबको सम्मत है । तामें श्री के दो रूप हैं । एक श्री, दूसरी लक्ष्मी, सोई श्रुतिमें लिख्यो है—श्री और लक्ष्मी दो आपकी पत्नी हैं दिन रात आप के निकटविराजे हैं गंध के द्वारा कोई से धर्षण करवेमें नहीं आवे । नित्य पुष्ट करवेवाली हैं । सब भूतनकी ईश्वरी ऐसी श्रीको हम बुलावैं हैं । तामें जो श्री सो वृषभानकी बेटी और जो लक्ष्मी सो श्रीरुक्मिण्यादिरूपा हैं । सोई बृहद्वैष्णवमें कह्यो है—जब भगवान देवता होंय तब ये देवीदेह धारण करैं । और जब विष्णु मनुष्यअवतार लेवें तब मानुषी होंय या प्रकार विष्णु के देह अनुरूप आत्माकी मूर्ति करैं हैं ॥ १ ॥

और श्रीनारदजी ने भी कह्यो है—जो जो मूर्ति भगवान हरि ईश्वर ग्रहण करैं हैं श्री भी भगवान की अनपायिनी सोई सोई रूप अवश्य कर के धारण करैं हैं ॥ २ ॥

तत्र श्रीराधिकायाः सर्वस्वरूपश्रैष्ठ्यं श्रुतिप्रामाण्यात् ॥ तथाहि श्रुतिः—राधया सहितो देवो माधवेन च राधिका ॥ योऽनयोर्भेदं पश्यति संसृतेर्मुक्तो न भवतीति ॥३॥ वामाङ्गे सहिता देवी राधा वृन्दावनेश्वरीति कृष्णोपनिषदि ॥४॥ परमागमचूडामणौ श्रीनारदपंचरात्रे च ॥ हरेरर्द्धतनू राधा राधा मन्मथसागरा ॥ राधापद्मारुया पद्मानामगाधा तत्र योगिनाम् ॥५॥ पुनस्तत्रैव ॥ राधया सहितं कृष्णं यः पूजयति नित्यशः ॥ भवेद्भक्तिर्भगवति मुक्तिस्तस्य करे स्थितेति ॥ ६॥ श्रियं विष्णुं च वरदावाशिषां प्रभवा उभौ भक्त्या संपूजयेन्नित्यं यदीच्छेत्सर्वसंपद इति ॥ ७ ॥

तासे श्रुति के प्रमाणते श्रीराधिका को सब स्वरूप से श्रेष्ठता है तामें श्रुति है श्रीराधाके सहित देवमाधव और माधवके सहित राधा विराजमान हैं जो इन दोनों में भेद देखै सो जन्ममरण से मुक्त नहीं होय ॥ ३ ॥ और कृष्णउपनिषद में भी कह्यो है—राधा वृन्दावनेश्वरी बाम अंग में विराजैं हैं ॥ ४ ॥ श्रेष्ठ आगमों के चूडामणि 'श्रीनारदपञ्चरात्र' में भी है—हरिको आधो अंग श्रीराधा हैं। राधा मनकी मथन करवे वाली सागर हैं। पद्मानामकी जो जो लक्ष्मी हैं तिन में पद्मानाम की श्रीराधा योगिनकों भी अगाधा हैं ॥५॥ और भी तहां ही—श्रीराधा सहित कृष्णको जो नित्य पूजन करै है ताकी भगवान में भक्ति होय है और मुक्ति तो ताके हाथ में धरी है ॥ ६ ॥ श्रीमद्भागवत में—श्री और विष्णु ये दोनों वरके दाता हैं और मनोरथ के प्रकट करवेवाले हैं जो सब संपदाकी इच्छा होय तो भक्ति करके सम्यक प्रकार इनकी पूजा करै ॥ ७ ॥

ब्रह्मवैवर्त्ते च—लक्ष्मी वाणी च तत्रैव जनिष्येते महामते ॥ वृषभानोस्तु तनया राधा श्रीर्भविता किलेति ॥८॥ वृहद्गौतमीयतन्त्रे च—देवी कृष्णसमा प्रोक्ता राधिका परदेवता ॥ सर्वलक्ष्मीमयी स्वर्णकान्तिः संमोहनी परा ॥९॥ ब्रह्मसंहितायां च—यः कृष्णः सापि राधा च या राधा कृष्ण एव सः ॥ अनयोरन्तरादर्शी संसारान्न विमुच्यते इति ॥ १० ॥ सम्मोहनीतन्त्रे—तस्माज्ज्योतिरभूद्द्विधा राधामाधवरूपकमित्यादि ॥ ११ ॥ अतश्च श्रीराधिकाया एव श्रीरूपत्वेन श्रेष्ठत्वमिति सिद्धम् ॥ १२ ॥

ब्रह्मवैवर्त्त में लिख्यो है—हे महामते लक्ष्मी और बाणी ये दोनों तहां हीं जन्म लैंयगी और वृषभानुकी बेटी जो राधा हैं सो निश्चय करके श्री होंयगी ॥ ८ ॥ वृहद्गौतमीतंत्र में—देवी श्रीराधिका कृष्ण समान वर्णन करी हैं । सब लक्ष्मीमयी स्वर्णकांति परा संमोहनी हैं ॥ ९ ॥ ब्रह्मसंहिता में—जो कृष्ण सोई निश्चय राधा हैं । जो राधा हैं सोई निश्चय कृष्ण हैं इन दोनों में जो अन्तर देखै सो संसार से नहीं छूटै ॥ १० ॥ संमोहनतन्त्र में—तस्मात् कारणात् एक ज्योति राधामाधवरूपसे दो प्रकार की भयी ॥ ११ ॥ याते श्रीराधिका ही को श्रीरूप करके श्रेष्ठता सिद्ध भयी यह श्रीमद्धरिव्यासदेव की व्याख्या समाप्त भयी ।

निज व्याख्या—कवित्त ।

श्यामजूके वाम अङ्ग सोहै राग रंग भरी,
अंग अंग छवि करै शोभाको सोहावनी,
कृष्णके अनुरूप सौभग अनूप जाको,
मुदा विराजमान चित्त मोद उपजावनी ।
सखी सहस्रनतें सेवित है नित्य प्रति,
महाभाव उदित हिये प्रेमामृतस्रावनी,
देवी वृषभानुजा सकल इष्ट कामदा,

द्रवित हृदय सदा सो श्याम मन भावनी ॥

बिना श्रीराधा के अकेले श्रीकृष्ण के स्मरण अर्चन में शास्त्र अपराध बतावै है । 'संमोहनतन्त्र' में शिवजी नें कह्यो कि गौर तेजके बिना जो श्याम तेज को अर्चन करै-ध्यान करै है । हे शिवे! सो पातकी होय । वाने ब्रह्महत्या, सुवर्ण चुरानो इत्यादि सब पाप कराळिये जो दोनों श्याम गौर तेजमें भेद करै ॥ 'श्रीनारदपञ्चरात्र' में भी है—आदि में श्रीराधिका को उच्चारण करै । पीछे श्रीकृष्ण माधवको उच्चारण करै । जो विपरीत करैगो तो निश्चय ब्रह्महत्या के पाप कों प्राप्त होयगो । श्रीकृष्ण जगत् के तात हैं । श्रीराधिका माता हैं पिता से सोगुनी श्रेष्ठ माता वन्दन पूजन करवे योग्य हैं । जिन श्रीराधा के चरणकमलनखर में महावरको रस श्रीवृन्दावन के वनमें परा प्रेमभक्ति से लगावते भये और श्रीराधा को चबायो पान मधुसूदन चाखते भये श्रीकृष्ण श्रीराधा में कुछ भेद नहीं जैसे दूध और धवलपनमें भेद नहीं है । यह तो साधकन कों विधि भयी । और रसिक भक्तन कों तो श्रीराधा के बिना कृष्ण व श्रीकृष्ण बिना श्रीराधा के दर्शन—अर्चन—वन्दनादि सुखदायी नहीं है । किन्तु महान् दुःखदायी है । एक क्षण दोनों को इकले

१—'सम्मोहनतन्त्रे'—' गौरतेजो विना यस्तु श्यामतेजः समर्चयेत् । जपेद् यो ध्यायते वापि स भवेत्पातकी शिवे । स ब्रह्महा सुरापी च' इत्यादि ।

२—'नारदपञ्चरात्रे'—'आदौ समुच्चरेद्राधां पश्चात् कृष्णं च माधवम् । विपरीतं यदि पठेद्ब्रह्महत्यां लभेद् ध्रुवम् ॥ श्रीकृष्णोऽस्ति जगत्तातो जगन्माता च राधिका । पितुः शतगुणा माता वन्द्या पूज्या गरीयसी' इति ॥

३—यत्पादनखरे रम्ये श्रीमद्वृन्दावने वने । सुस्निग्धालक्तकरसं प्रेम्णा भक्त्या परा ददौ ॥ राधाया भुक्तताम्बूलं चखाद मधुसूदनः । द्वयोरैक्ये न भेदश्च दुग्धधावल्ययोर्यथा ॥

नहीं देख सकैं । 'श्रीराधासुधानिधि' में लिख्यो है कि श्रीराधाकी दास्यता छोड के जो गोविन्द के संग की आशाको यत्न करैं हैं सो परिपूर्ण चन्द्रमा की पूर्णमासी बिना कांक्षा करैं हैं । किंच श्यामसुन्दर को रति की प्रवाह-लहरी को बीज जो श्रीराधा तिन कों नहीं जानते भये; वे महा–अमृत के समुद्र कों प्राप्त भयें पर एक बुंद ही मिली । तासैं अवश्य युगलस्वरूप स्मरणीय है । और तत्त्व करके श्रीकृष्णको जानना सोई है जो शक्ति सहित जानै सो आह्लादिनी महाशक्ति जो सब शक्तिन में श्रेष्ठ ताकी सारभूत अर्थात् निज स्वरूप श्रीराधा है । यह तन्त्र में लिख्यो है–जो श्रीराधाकों न जान्यो तो कृष्णकों जान्यो ही नहीं ॥

अब श्रीराधा के श्रीपने में और भी प्रमाण दिखावैं हैं । कुरुक्षेत्र की यात्रामें सोलह हजार एक सो कृष्णकान्ता द्रोपदीजी से बोलीं कि हे साध्वि ! हम साम्राज्यादि भोग नहीं चाहैं । इन श्रीकृष्णकी चरणकमल की रज जो वृन्दावन की श्रीके कुचकुंकुमकरके युक्त जाकी पुलिन्दीं गोचारण में चाहना करैं ताकों मस्तकपर धारण करैं । यहां भी श्रीराधा को ही वर्णन कियो । 'राधा वृन्दावने वने'

(१) 'श्रीराधासुधानिधौ'–'राधादास्यमपास्य यः प्रयतते गोविन्दसङ्गाशया सोऽयं पूर्णसुधारुचेः परिचयं राकां विना काङ्क्षति । किञ्च श्यामरतिप्रवाहलहरी बीजं न ये तां विदुस्ते प्राप्यापि महामृताम्बुधिमहो विन्दुं परं प्राप्नुयुः ॥

(२) तन्त्रे–'आह्लादिनी महाशक्तिः सर्वशक्तिवरीयसी । तत्सारभूतराधेयमिति तन्त्रे प्रतिष्ठता, ।

(३) श्रीमद्भागवते दशमे,न वयं साध्वि साम्राज्यं स्वाराज्यं भौज्यमप्युत । वैराज्यं पारमेष्ठ्यं वा आनन्त्यं वा हरेः पदम् ॥ कामयामह एतस्य श्रीमत्पादरजः श्रियः । कुचकुङ्कुमगन्धाढ्यं मूर्ध्ना वोढुं गदाभृत । पुलिन्द्या यदूवाञ्छन्ति ' इत्यादि ।

या न्याय करके रुक्मिणी लक्ष्मी रूप तो उनमें है ही और उन्हीं कृष्णकान्ता को अर्जुन लाये। और उद्धवजीने श्रीभागवत सुनाय के वृन्दावन में श्रीराधाकृष्ण की प्राप्ति कराई। 'ब्रह्मसंहिता' में सब गोपिनको श्रीरूप वर्णन कियो है श्रीराधा को तो कहनो कहा। गोलोक में कान्ता जो गोपी सो श्री है। और परम पुरुष कृष्ण सो कान्त है। जैसे सब भगवत्स्वरूप और अवतार में व्रजेन्द्रनन्दन रासविहारी की श्रेष्ठता है तैसे लक्ष्मी और गोपिन में श्रीराधा श्रेष्ठ है। काहे से कि सब शची भवानी आदि स्त्रीनमें रमा उत्तम है। और गोपी रमातमा हैं। श्रीराधा गोपीतमा प्रसिद्ध ही हैं। सो श्रीराधा श्रीकृष्ण की पट्टारूढ महिषी कान्तपर आज्ञा करवेवाली उन के वामअङ्ग में पत्नीस्थानीय बिराजैं हैं। तिनको विशेषण 'देवी' अर्थात् द्योतमाना कोटि शरदपूर्णचन्द्र जिनके मुखचन्द्र के आगे लज्जा करैं ऐसी, प्रकाशमाना श्रीकृष्ण के हृदय समुद्र की बढावनवारी प्रेमकी लहर लेवावनवारी अथवा द्योतमाना नाम व्यापिनी सब चराचर में श्रीकृष्ण व्यापक तिनके सर्वांग में व्यपिनी श्रीराधा है। ब्रह्माण्ड पुराणमें सोई श्रीमुख से कृष्ण ने कह्यो है जिह्वा में राधा, स्तुतिमें राधा, हृदय में राधा, नेत्र में राधा सर्व अंग मैं व्यापिनी राधा, मैं राधा

१-ब्रह्मसंहितायाम्- श्रियः कान्ताकान्तः परमपुरुषः कल्पतरवो, द्रुमा भूमिश्चिन्तामणिगणमयी तोयममृतम्। तथा गानं नाट्यं गमनमपि वंशी प्रियसखी। चिदानन्दः ज्योतिः परमपि तदास्वाद्यमपि च॥,

२-ब्रह्माण्डपुराणे-'जिह्वा राधा स्तुतौ राधा नेत्रे राधा हृदि स्थिता। सर्वाङ्गव्यापिनी राधा राधैवाराध्यते मया'।

को आराधन करौ हो । कदाचित् कहो कि आत्माराम श्रीकृष्ण ऐसे कैसे कहैं । ताके लिये स्कन्दपुराणकी ४ अध्याय के माहात्म्य में लिख्यो है-कि आत्मा तिनकी श्रीराधा हैं तिन के साथ रमण करवे से ठीक आत्माराम यह रहस्य के वेत्ता जानै हैं ब्रह्मसंहिता में है—तासे तुम रमारूप आत्मा करि के रमण करतेभये तासे श्रीराधिकामें शक्तिवाद भी नहीं है। और और शक्ति जो परिकर रूप आपकी है वामेंकुछ विरोध भी नहीं है सोई 'कृष्णयामल' में लिख्यो है—जो शक्ति सम्यक् वर्णन करी है वे गोपीस्वरूप होके श्रीराधिका की सखी बनके कृष्णचन्द्रकी उपासनाकरैं हैं । और जो कहूं कहूं इनको भी शक्तिपनो सुन्योजाय है सो आकृति की समानता से अभेद को अभिप्राय है । सो ही पराये मतको उपन्यास करके मूर्द्धाम्नाय तन्त्र में श्रीराधिकाके स्तवराजमें वर्णन कियो है—कोई तुम को श्री कहैं, कोई कवीन्द्र गौरी कहैं, कोई परेशी कहैं । अब आधेमें अपनो मत कहैं—तुम परात्पर ब्रह्म सनातन हो । तीन गुण करके लोकन को पोषण करो हो । सो ही तीन गुण 'बृहद्गौतमीय' में लिखे हैं ।

---

(१) स्कन्दपुराणे—'आत्मा तु राधिका तस्य तयैव रमणादसौ । आत्मारामतया प्राज्ञैः प्रोच्यते गूढवेदिभिः' ।

(२) ब्रह्मसंहितायाम्—'तत्त्वमस्या आत्मना रमया रेमे' ।

(३) कृष्णयामले—याः शक्तयः समाख्याता गोपीरूपेण ताः पुनः । सख्यो भूत्वा राधिकायाः कृष्णचन्द्रमुपासते ।

(४) मूर्द्धाम्नायतन्त्रे—'केचिच्छ्रियं त्वां कतिचिच्च गौरीं परे परेशीं ब्रुवते कवीन्द्राः । परात्परं ब्रह्म सनातनं त्वं गुणत्रयेणैव बिभर्षि लोकम्' इति ।

सत्व, तत्त्व, परत्व तीन गुण को मैं निश्चय करके हूं, तैसे त्रितत्वरूपिणी श्रीराधा हैं । यह भगवानने कह्यो तामें सत्व कार्य, तत्व कारण, परत्व तासे भी न्यारो, अथवा श्रीपनेसे तदेकआश्रय होके गौरीपने से अर्द्धाङ्गी होके परेशीपने से तादात्म्य होके शक्तिवाद के अभिमत जो तीन गुण तिनसे लोक नाम अवान्तर उपासक को पोषण करो हो । चौथो स्वरूप ब्रह्म तीनो में भरो भयो है या न्याय करके परतें परे जो ब्रह्म सो ही तुम हो । ब्रह्मात्मापर्यायी तुम हो । यह आत्मा ब्रह्मश्रुति में सिद्ध है । तैसे ही अथर्वणि पुरुषबोधिनी के विषय बारह वन वर्णन के प्रस्ताव में श्रुति लिखी है–तिन परब्रह्म की आद्या प्रकृति अर्थात् आद्यस्वरूप (संसिद्धि व प्रकृति) ये दोनों स्वरूप स्वभाव निसर्ग कहेजायं हैं, यह अमरकोष में है । स्वरूप को आदिपनो और अविकारी (पनो) वर्णन कियो है । प्रकृतिशब्द जो शक्तिवाचक होय तो ताकी आद्या यासे विरुद्ध होय ध्यान करवे योग्य है । सो कौन है ! 'राधिका मेरे नाम करके भी आराधन करवे योग्य तासें उनको राधा नाम पड्यो'–यह कृष्णयामल के वचन हैं ।

१–बृहद्गौतमीये–'सत्त्वं तत्त्वं परत्त्वं च तत्त्वत्रयमहं किल । त्रितत्त्वरूपिणी सापि राधिका परदेवता'–इति सत्त्वं कार्यम्, तत्त्वं कारणम्, परत्वं ततोऽपि भिन्नम् ।

२–स्वरूपतस्तु 'तुरीयं त्रिषु सन्ततम्' इत्यादि न्यायेन परादपि (परं) यद्ब्रह्म तदेव त्वम्, परस्यात्मेति ब्रह्मात्मनोः पर्यायत्वम्–'अयमात्मा ब्रह्म'. इति श्रुतिसिद्धमितिसंक्षेपः

३–तथाथर्वाणि पुरुषबोधिन्यां द्वादशवनवर्णनप्रस्तावे-तस्याद्या प्रकृतिः राधिका, नित्या निर्गुणा सर्वालङ्कारशोभिता प्रसन्नाशेषलावण्यसुन्दरी अस्मादादीनां जन्मदात्री

४–'संसिद्धिप्रकृती त्विमे,' 'स्वरूपञ्च स्वभावश्च निसर्गश्च'–इत्यमरः ।

५–कृष्णयामले-आराध्या मम नाम्नापि विज्ञेया तेन राधिका ॥

अभेद विचार करके कृष्ण शक्तिमान्, राधिका शक्ति यह भी दूर किये ॥

नित्या अर्थात् तीन काल में एकस्वरूपा निर्गुण अर्थात् माया के गुण से रहित सर्वालङ्कार करके शोभित सब-शब्द संकोच को दूर करैं हैं अर्थात् सात्विक व आङ्गिक अलङ्कार से शोभायमान प्रसन्ना समग्र लावण्यता से सुन्दरी हम सरीखन की जन्मदाता श्रुति भी है-जाके अंशांश के बहुत विष्णुरुद्रादिक होय हैं। अब शङ्का करै हैं कि-राधा भी ब्रह्म कृष्ण भी ब्रह्म दो कैसे होयं ? । ताको समाधान पहिले कहि आये कि एक ज्योति रसिक भक्तन के सुख देवे को दो रूप से नायक नायिका प्रकट होते भये। परस्पर अपने अपने उचित गुण अङ्गीकार करते भये। प्रकाश-भेदमें दोष नहीं है ॥ वे अलङ्कार 'मुक्ताचरित' ग्रन्थमें श्रीरघुनाथ गोस्वामीने दिखाये हैं-महाभावस्वरूपा श्रीवृषभानु की बेटी सखीन को जो प्रणय सोही सुगन्धि को उबटनो तासे उद्वर्तित करुणामृत की लहरन से तारुण्यामृत की धारा तैं लावण्यामृतके जल से स्नान कराई भयी लज्जापट को वस्त्र पहिरैं सौन्दर्य चन्दन से चर्चित श्यामल उज्ज्वल कस्तूरी से चित्रितकलेवर १ कम्प, २ पुलक, ३ स्तम्भ, ४ स्वेद, ५ गद्गद, ६ रक्तता, ७ उन्माद, ८ जाड्य, ९ अश्रु इन नव रत्न करके अलङ्कार रचना को संयोग पायो. गुण अनेक सोही फूल तिनकी माला धारण करैं. धीरपने को वस्त्र, ढक्यो जो मान सोही चोटी, सौभाग्य को तिलक, कृष्णनाम के कर्णफूल, रागके ताम्बूल से लाल होठ,

१-'अस्यांशांशा बहवो विष्णुरुद्रादयो भवन्ति इति श्रुतिः'।

प्यारे से जो कौटिल्य सोही कज्जल, प्रणय रोष की चोली, बन्धुगुप्ति के स्तन, नर्मभाव से निष्पन्द मन्द मुस्क्यान के कपूर से बसे भये घरमें गर्वके पल्यंक पर बैठी इत्यादिक ॥

अब दूसरो विशेषण—'वृषभानुजा'—अर्थात् वृषभानु की बेटी श्रीवृषभानु व कीर्तिजीने अत्यन्त तपस्या करी तिन-पर कृपा करके तिनके घरमें पुत्री होके प्रगट होती भयीं। तन्त्रमें पुराणनमें जन्मकथा बहुत हैं ग्रन्थविस्तार के भयसे खोज नहीं कियो। 'राधासुधानिधि' में लिख्यो है कि जो कृपा करके वृषभानु के घरमें प्रगट होती भयीं। वृषभानु, कीर्ति नित्य के माता पिता हैं उनको तप करनो लोकसंग्रहमात्र है। पहिले श्रीकृष्ण की तरह षोडश वर्ष किशोररूप को दर्शन दियो। फिर दम्पती के देखन उनकी रुचि अनुसार प्राकृत बालिका की तरह ह्वैगईं। आप के लोक में अवतार लेवे को प्रयोजन बहुत है सोही संक्षेप करके दिखावैं हैं—'राधासुधानिधि' में—जिन श्रीराधा के चरणकमल की रेणु की कणिका मस्तक पर धारण करिवेको अधिकार ब्रह्मा शिवादिक भी नहीं प्राप्त होते भये सो केवल गोपिन को एक भाव ताके आश्रय है अर्थात् गोपी होय तब मिलै। रास दर्शन कों शिवजी गोपीरूप भये तब मिली। अथवा गोपिन के आश्रय को भाव (प्रेम) की अनुगति से ताकी प्राप्ति है ऐसी भी प्रेम अमृत

१—'राधासुधानिधौ'—'या प्रादुरास्ते कृपया वृषभानुगेहे'।

२—'राधासुधानिधौ'—यत्पादाम्बुरुहैकरेणुकणिकां मूर्ध्ना निधातुं नहि प्रापुर्ब्रह्म-शिवादयोऽप्यधिगतिं गोप्यैकभावाश्रयाः। सोऽपि प्रेमसुधारसाम्बुधिनिधी राधापि साधारणीभूतागतिक्रमेण वलिता हे दैव तुभ्यं नमः॥

की समुद्र भी श्रीराधा कालकी गति क्रम करके बलवान अर्थात् जीवन के भाग्य बलवानता से भयीं जो कृपा साधारणी होगई । लोक में राधा नाम और उनकी लीला सब मनुष्य सुखपूर्वक जानते भये। कृपा बिना ऐसे अलभ्य लाभ नहीं मिलै तासे जीवन के दैव नाम भाग्य को दण्डवत है । अभिप्राय यह है कि ऊंचे वृक्ष छुँहारे पर जो फल लगे और छोटे छोटे बालक चाहना करैं तो कोई रीति से नहीं मिलैं, हां जो भारी आंधी चल जाय तो सम्भव है. तासे जाकी पदवी लक्ष्मी शुक सनक आगम निगम से दूर सो श्रीराधा कृपापरवश होके भूतलपर प्राकृत मनुष्य की तरह प्रकट होती भयीं । उत्तम श्लोक श्रीकृष्ण के गुण लीला जो मुक्त जन तृष्णारहित सनका-दिकन कों अति प्यारी और मुमुक्षूनकों संसार रोग की औषधि और महाविषयिन कों श्रवणादिक इन्द्रिय और मनकी रमावनवारी सो बिना राधा के साहित्य नहीं होसके मत्स्य, वाराह, नृसिंह आदि भगवत अवतार लेके बारंबार पृथ्वीपर धर्म स्थापन करैं और अधर्म उच्चाटन करैं। भक्त जनन को दुःख दूर होय । गाय गाय के संसार समुद्र तरैं । पर शृङ्गार रसके उपासक रासलीला दान मान दुलहिन दुलह के उपयोगी विहार शय्यादि निकुञ्जक्रीड़ा के चातकवत तदैकजीवनभूत नरक स्वर्ग अपवर्ग निर्वाण गतिपर्यंत को तिलाञ्जलि देनेवारे युगल किशोर रूप माधुरी के रसमें पगे नित्यप्रति रूप माधुरी के आरोहिणी अवरोहिणी करिबे में पलक समान काल अन्तर कों युग बराबर समुझैं

उनको नृसिंहजीके महा आटोप भयंकर कराल डाढ मुखनेत्रादि से दैत्यनके वध के दर्शनमें कब सन्तोष होय, या वामन परशुराम के धरती नाप व क्षत्रियनिग्रह में का लाभ मिलै । या कारण से उन रसिकन की छाती विरह की गर्म्मी सें जरै ताके सीरी करिबेकों व नेत्रादि इन्द्रियन कों अपूर्व सुखविधान करिबेकों यही अठाईसवें मन्वन्तर अर्थात् वैवस्वत मन्वन्तर में जब पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीव्रजेन्द्रविहारी श्रीकृष्ण मथुरामण्डल में अवतार लेत भये तो उन रसिकन के आंसू पोंछिवेकों और प्रीतम के साथ रसमयी लीला करिवेकों महाभावादि प्रेमकी सीढी जगत् में प्रकाश करिवेकों कलियुग के जीव महाकामी जिनकों योगज्ञानको नाम भी सुननो अच्छो न लगै उनके चित्तको जैसे अनायास आकर्षण होय ताकेलिये आप श्रीराधा प्रगट होती भयीं यद्यपि लीलारूप से सर्वदा श्रीकृष्ण के साथ रहैं पर सर्वांशपूर्ण अत्र ही प्रादुर्भाव है । मानुषी आकृति से लोकमें अति माधुरी फैलै और अपनी जातिको जानके सबकों सब भाव से प्रीति होय तासे श्रीवृषभानु के घरमें भादों शुक्ल अष्टमी बुधवार में अनुराधा नक्षत्रमें अवतार लेके प्रीतम श्रीकृष्ण के साथ वर्षभरमें जो लोकप्रसिद्ध होरी, दीपावली, वसन्त, श्रावण फूल बीनन, रासविलास, जलकेलि, वनविहारादिकी ऐसी लीला करी कि शृङ्गार रस उज्ज्वल जो प्राकृत हाड चाम मांस के नायिका नायकमें खर्च करिवे सें अपनेको धिक्कारी मानतो हो ताको साफल्यता विधान करी । और कविन की वाणीपर जो

सरस्वती ताको विश्रामस्थान भयो और श्रवणमात्र से सब तत्पर होजाय सोही उपाय कियो। जीव कैसे बहिर्मुख रहिजावै ताके लिये लीलायश को तुमल बांध दियो और रासलीला की तो आप ईश्वरी हैं। कार्तिक मास में श्रीराधासहित दामोदर को अर्चन परम विधान है सो ही पद्मपुराण में प्रमाण है—प्रातः उत्थापनमें लिखी है हे राधे! उठो उठो निद्रा छोड़ो तुम रासेश्वरी हरिकी प्यारी हो, महादेवी दामोदर की वल्लभा हो सोहीं कोई कविने श्रीकृष्ण से कह्यो—

सवैया।

'सूकर ह्वै कब रास रच्यौ तुम बावन ह्वै कब गोपी नचाई,
ह्वै नरसिंह कहौ हरिजू तुम कौनकि छातियन रेख लगाई।
कब तुम मीन ह्वै केश सवांरे कूर्म भये कब वेणु बजाई,
वृषभानुसुता प्रगटी जबतैं तबतैं तुम केलिकलानिधि पाई'॥

अब तीसरो विशेषण कहैं 'मुदा विराजमाना' अर्थात् हर्षपूर्वक विशेषेण राजमाना इन शब्दों सें स्वतन्त्रता दरसै है। स्वाधीन कान्ता है पराधीन कान्त है। और भी श्रीलक्ष्मी—जानकी—रुक्मिणी—स्वरूपभूता सच्चिदानन्द शक्ति गभवान् की पत्नीस्थानीय हैं। पर वे सब पतिव्रता भर्ता के आधीन हैं श्रीराधा स्वाधीनभर्तृका वश्यप्रेष्ठा हैं. तासे श्रीकृष्ण को उनके चरणस्पर्श पीछे पीछे डालनो, उनके कटाक्षशर से मूर्छित होजानो, अधरामृत लेनो अनुचित नहीं है। यामें अनेक शास्त्रके प्रमाण महान्‌रसिक भक्तनके

(१) 'पद्मपुराणें'—'उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भो राधे त्यज निद्रां हरिप्रिये। रासेश्वरि महादेवि श्रीदामोदरवल्लभे'।

आचरण दिखावैं हैं। कोई या रसमय प्रकरणके अनभिज्ञ (न जानेनवाले) नाँक भौंह सिकोड़ैं ताको पहिले ही समाधान सुनलेव कि जब श्रीकृष्ण[1] राधाकी आत्मा व श्रीराधा श्रीकृष्ण की आत्मा हैं तो परस्पर नति अथवा कुछ करैं सब उचित है ॥ दूसरे लोक में रीति है कि जो कोई के सङ्ग अत्यन्त उपकार करै और दूसरे से बनै नहीं तो सर्वदा ताके आधीन रहै । तासे महाभावस्वरूपा श्रीराधा को आपने ही श्रीमुख सें वर्णन करी है कि कृष्णप्रेममयी[2] राधा मैं राधाको आराधन करौं हों' उनके प्रेमके आगे श्रीकृष्ण बिकि गये हैं सो आगे के प्रसंग में वर्णन करेंगे । श्रीराधिका को कृष्ण में मदीयतामय भाव मधुस्नेह अर्थात् कृष्ण हमारौ है फिर मोल बिके भयेसे जो कराया जाय सो अनुचित नहीं है सो आप ही करैं ॥ तीसरे जैसे आत्माराम[3] मुनि शुक सनकादिक जिनकी जड चेतन की ग्रन्थि न्यारी भयी, मायारहित भगवान् में अहेतुकी अर्थात् कामनाशून्य भक्ति करैं हैं काहे से कि हरि भगवान् के गुण ऐसे ही हैं । तैसे आत्माराम भगवान् भी श्रीराधा तो बहुत बात है व्रजकिशोरीमात्रके गुण सें आकर्षित उनमें भक्ति करैं हैं ॥ चौथा मुख्य प्रयोजन यह है कि श्रीराधा कृष्णको यह अवतार शृङ्गार रस की अत्यन्त पुष्टि करवे के लिये है । उज्ज्वल रसराज है सच्चिदानन्द भगवत्स्वरूप है । श्रुतिमें भी है—'रसं[4] निश्चय करके सो

१-'ब्रह्माण्डपुराणे'-'राधा कृष्णात्मिका नित्यं कृष्णो राधात्मको ध्रुवम्'-इति ।
२-'कृष्णप्रेममयी राधा राधेवाराध्यते मया' इति।
३-'श्रीभागवते'-'आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्थायोऽप्युरुक्रमे। कुर्वन्त्यहेतुकिं भक्तिमित्थंभूतगुणो हरिः' ॥
४-श्रुतिः-'रसो वै सः रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति'-इति ।

है' यह जीव रस कों पाय के आनन्दी होय है ऐसे अप्राकृत रस की प्राकृत नायक नायिका से कब पूर्ति होगी। श्रीराधाकृष्णमें ही घटै है। और रसकी पुष्टि होवेमें नायिका की प्रधानता नायक की आधीनता अवश्य ही चाहिये। लोकमें भी रीति है कि विवाहादिके समय दुलहिन को जुवामें जितावनो, ताको जूँठो दुलह को खवावनो चरण छुआवनो, यह व्यवहार सबको सम्मत है। और रसिकन को तो प्राणतुल्य जीवनमूल है तासे श्रीराधा नायिकानमें मुकुटमणि, श्रीकृष्ण नायकशिरोमणि उनमें ही यथार्थ या भावकी शोभा है। भला श्रीकृष्णको ऐसे आचरण में कुछ स्वरूपकी हानि अथवा अरुचि होय सो नहीं किन्तु भूषण है, और अति सुखदायी है। काहे से कि चारप्रकार के नायक धीरउदात्त आदिमें धीरललित नायक श्रीकृष्ण हैं। ताके ये लक्षण हैं —विदग्ध होय, नई तरुणाई होय, परिहासमें निपुण होय, कोई प्रकार की चिन्ता न होय, 'धीरललित होय सो प्रायः करके प्यारी के वश होय है। प्यारी के वश होवेसे ही उत्तम नायकपनो सिद्ध होय है। अब प्रमाण या प्रकरण के भाषामें रसिकन के अनुभव बाणी की तो बड़ी धूमधाम की नदियां लहरावें हैं तैसे ही संस्कृत के सद्ग्रन्थन में भी बहुत प्रमाण हैं दिङ्मात्र देखो—'रसोदधि' निष्पक्ष ग्रन्थ—सीत्कार संज्ञा से जाके अभिमुख होय और प्यारो निरन्तर जाके पीछे पीछे

१—'विदग्धो नवतारुण्यः परिहासविशारदः। निश्चिन्तो ललितो धीरः प्रायः स्यात् प्रेयसीवशः'।

२—'रसोदधौ'-'सीत्कारसंज्ञाभिमुखो यस्याः सततं प्रियो भवेदनुगः। सख्यप्रेष्ठा सोक्ता व्रजरमणीमण्डनं यथा राधा' इति।

डोलै ताको नाम वश्यप्रेष्ठा (प्यारो जाके वश) व्रजरमणीन में जैसे राधा। 'पद्यावली' में—कमलनेत्र को दण्डवत्' वेणुबजैया विनोदीकों दण्डवत् और राधा अधरपान स्वभाववारे वनमालीकों दण्डवत्। गीतगोविन्द' में श्रीमुख वचन—मदन की अनल मेरे मानसकों निरन्तर जरावे है शीघ्र मधु अधर पान करावो। 'श्रीमद्भागवत' में कोई रास करते २ थक गई, कृष्ण पास में ठाडे कुण्डल की कान्ति से शोभायमान जो कपोल तिन से कपोल जो मिलाय रही चर्वित पान अपनो ताकों भगवान देते भये कि ताको लेते भये। 'राधासुधानिधि, में—जिन श्रीराधाके कटाक्ष रूपी बान लगवे से श्रीकृष्ण के हाथ से वेणु गिरपड़ी, मुकुट खिसल गयो, मूर्छा होगई तिन श्रीराधा की रससे परिचर्या कब करौंगी। श्रीमद्भागवत में—रास करतअन्तर्धान होके जब प्रगट भये तब 'एका नाम श्रीराधा मुख्या दोनों भौंहकों जोड़के मानों कमान बनाई, प्रेमके कोप से विह्वल कटाक्ष को आक्षेप सोही बाण दांतन से होठ दाबे सोई चुटकी श्रीकृष्णपर मारती सरीखी देखती भयी और आप मिलवेको नहीं गई सोई हमारे पास आयके मिलैगो॥ सूरदासजी ने भी कह्यो है—

१—'पद्यावली'—'नमो नलिननेत्राय वेणुवाद्यविनोदिने। राधाधरसुधापान शालिने वनमालिने' इति।

२—'गीतगोविन्दे'—'सपदि मदनानलो दहति मम मानसं देहि मुखकमलमधुपानम्' इति।

३—'श्रीमद्भागवते'—'कस्याश्चिन्नाट्यविक्षिप्तकुण्डलत्विषमण्डितम्। गण्डं गण्डे संदधत्याः प्रादात्ताम्बूलचर्वितम्॥

४—'श्रीमद्भागवते—' एका भ्रुकुटिमाबध्य प्रेमसंरम्भविह्वला। घ्नन्तीवैक्षत्कटाक्षेपैः संदष्टदशनच्छदा'

चितई चपल नयन की कोर ॥
मनमथ बाण दुसह अनियारे,
निकसे फूट हिये वहि ओर ॥
कहुं मुरली कहुं मुकट मनोहर,
कहुं पट कहूं चन्द्रिका मोर ॥
मुरछि परे सुध देह बिसारी,
तरुण तमाल पवनके जोर ॥
प्रेम सलिल भीज्यो पीरो पट,
फट्यो निचोरत अँचरा छोर ॥

इत्यादि ।

महामर्यादास्थापक श्रीमत्प्रभु निम्बार्क भगवान् ने 'प्रातःस्तव' में लिख्यो है—प्रातःकाल वृषभानुकी सुताके चरण कमल स्मरण करौं हौं जिनको व्रजसुन्दरीन के नेत्ररूपी भौंरा चारों ओर सेवन करैं । और व्रजेश (नन्द) के बेटा हरि (श्रीकृष्ण) जो बहुत ही चतुर सो प्रेमसे आतुर होके जिन चरण में सदा वन्दन करैं ॥ और 'राधाष्टक' में वर्णन है—मुकुन्द को तुमने प्रेमडोरसें बांधलियो सो पतंग जैसें डोरके वश तैसे तुह्मारे पीछे पीछे भ्रमें है ॥ रसिकमुकुटमणि श्रीभट्टजी के युगलशतक को पद है—

राधेजूके चरण पलोटत मोहना ॥
नील कमल के दलन लपेटे,
अरुण कमलदल सोहना ॥

१-'प्रातः स्तवे'-'प्रातः स्मरामि वृषभानुसुतापदाब्जं नेत्रालिभिः परिनुतं व्रजसुन्दरीणाम् । प्रेमातुरेण हरिणा सुविशारदेन श्रीमद्व्रजेशतनयेन सदाभिवन्द्यम्, ॥

२-'राधाष्टके'-'मुकुन्दस्त्वया प्रेमडोरेण बद्धः पतङ्गो यथा त्वामनु भ्राम्यमाणः'॥

कबहुंक ले लै दृगन लगावत,
अलि धावत जिम मोहना ॥
श्रीभट्टके प्रभु छबीली राधे,
होत जगतें छोह ना ॥

अब सब प्रमाण से ऊपर साक्षात् भगवत् हाथके अक्षर सुनो—सब जगतमें विख्यात है कि श्रीजयदेवकृत 'गीतगोविन्द' जैसो हरिको प्यारो है पण्डितन के समाजमें परीक्षाके समय एक एक पत्रा श्रीजगन्नाथ की छाती से लग्यो पायो। मानके प्रसंग की अष्टपदी लिखते[१] लिखते जब सीस चरणनपर धरनो लिखवे लगे तब लोकविश्वासके अर्थ आप न लिखके 'किंदुबिल्वग्राम' अपने निवासस्थान से गङ्गास्नान को चले गये। 'पद्मावती' जी पतिव्रता रसोई करके बाटदेखैं। श्रीजगन्नाथजी जयदेवरूपसे प्रगट होके वा अष्टपदी में इतनो लिखगये—'कामगरलको खण्डन करवेवारो मेरे सीस को मण्डन पदपल्लव देव' पीछे रसोई पाय के चलेगये। पद्मावतीजी के प्रसाद लिये पीछे जयदेवजी आये समाचार समुझ के हर्ष विस्मय को प्राप्त भये जब स्वतन्त्र ही लिखगये। अब विशेष का प्रमाण चाहिये ॥

अब चौथो विशेषण श्रीकृष्ण के अनुरूप नाम बराबर है सौभग जिनको ऐश्वर्य, माधुर्य, रूप, गुण, लावण्य, सौन्दर्य, सौकुमार्य सबमें श्रीकृष्ण के समान है। अथवा अनुरूप को अर्थ उनके उचित—वे श्याम ये श्यामा, जबकि एक ज्योति ही दो प्रकार की भई तब दोनों पुरुष होवेसे

१—'गीतगोविन्दे'—स्मरगरलखण्डनं मम शिरसि मण्डनं देहि पदपल्लवमुदारम्।
ज्वलति मयि दारुणो मदनकदनानलो हरतु मदुपाहितविकारम्' ॥ इति।

शोभा नहीं, दोनों स्त्री होवेसे सुख नहीं। तासे एक पुरुष एक स्त्री एक सांवरो एक गौरी एक पति एक पत्नी। ऐश्वर्य में एक देव एक देवी। माधुर्य में एक गोप एक गोपी। नायकपनेके जो गुण जैसी आकृति जैसी लीला चाहिये उनने अपने स्वरूप में धरलिये। नायिकापने के सब गुण लक्षण उनने अपने स्वरूप में धरलिये। कोई जो शुकदेवजी के हृदयरहस्य नहीं जानै वे ऐसे कहैं हैं 'श्रीमद्भागवत' कृष्ण-लीलाप्रधान तामें श्रीराधा को नाम ही नहीं है सो ठीकही है। शुकदेवजी की रहस्य वस्तु परम इष्ट गोपनीय ताको छिपावनो योग्य पर जैसे धनिक के पास अमोल मणि, सोनाहो ताकों दुष्ट निकृष्ट चौरादिकन से छिपावनों भी चाहे पर अमूल्य वस्तु होवे को हर्ष आपही प्रगट करदेय है। झीने वस्त्र में ढकीहुई मणि जैसे गुप्त प्रगट दोनों रीति दिखावै तैसे कोई जन को राधा नाम गुण न दीखै और अधिकारी स्पष्ट देखलेय। ऐसो शुकदेवजी को इन्द्रजाल है और भी रहस्य है कि दुलहिन को नाम पंचायत में न लियो जानो उक्ति से संज्ञा करी जानी यह रसपोषक है। यहां भी श्रीमदाचार्य ने 'राधा' नाम न लेके वृषभानुजा ही कह्यो। 'भक्तमाल' में मुख्य नाम लेवेके स्थल में श्रीनाभा गोस्वामी ने वृषभानुकुँवरि ही वर्णन कियो। अब रासलीला की 'श्रीभागवत' में परिपाटी मेरे नेत्रन से देखो जा समय वंशी बजाय के रासविहारी वनवारी ने अपनी प्राणप्यारी बुलाई और सब गौरी भौरी किशो-री वंशीशब्द सुधामादक से छकीभयीं मोहिनीमन्त्र की

कीलीभयीं लोकलाज धर्मसमाज कों तिलजल प्रदान कर चन्द्रमा की चांदनी को प्रकाश, जाती जुही फूलने को विकास कानन अतिशय सुवास, शरद मास, यमुनाजी की शीतल मन्द सुगन्ध पवन को चलन ऐसे श्रीवृन्दावन में आय के प्राणपति के दर्शन किये पहिले परस्पर बोली ठोली में बुद्धि चतुराई की राशि भई। फिर नृत्यआरम्भ भयो। वैजयन्ती माला धारण करके जा समय अपनो श्रीअंग मरकत मणि सदृश प्यारी सुवर्ण गुटका सदृश तिनको मण्डल बांधके श्रीवृन्दावन के प्रदेश को माला पहिरावते भये। और सब को समान सुख देते भये। ता समय श्रीराधा को उत्कर्ष न होवे सें अनादर, और अन्य सबन कों प्यारी की समानता से गर्व तासे मान भयो (ता गोपी साधारण एक शेष करके 'तासाम्') गोपिन को सौभाग्य को मद देख के, मानवती वृषभानुनन्दिनी कों देखके तिनको मद दूर करिबेको प्यारी कों प्रसन्न करवे कों प्यारी कों लेके गोपिन छोड़के अन्तर्धान होगये सोई स्पष्ट 'गीतगोविन्द' में जयदेवजीने वर्णन कियो है—'कंसके वैरी भी संसारवासनाकी शृङ्खला में बँधी भयी राधा को हृदय में लेके अंतर्धान होते भये' फिर विरहव्याकुल सब

१-श्रीभागवते-तासांतत्सौभगमदं वीक्ष्य मानं च केशवः प्रशमाय प्रसादाय तत्रैवान्तरधीयत। तास्च सा चेत्येकशेषेण 'तासां' व्रजकिशोरीणां तस्या वृषभानुकुमार्यास्चेत्यर्थः तासां सौभगमदं प्रशमयितुं तां मानिनीं प्रसादयितुम्॥

२-गीतगोविन्दे-'कंसारिरपि संसारवासनाबद्धलालसाम्। राधामाधाय हृदये तत्याज व्रजसुन्दरीः।

गोपी ढूंढती भयीं। वनके उद्देश में श्रीकृष्ण के चरण-चिह्न देखती भयीं। ताके परे वधूके चरणचिह्न से मिले भये देखे। वे चरणचिह्न जैसे बायें चरणके अँगूठा के मूलमें यव १ ताके नीचे चक्र २ ताके नीचे छत्र ३ ताके नीचे वलय ४ ताके परे अँगूठा व तर्जनी की सन्धिसे लेके आधे चरण पर्यन्त ऊर्द्ध रेखा ५ बीचकी अङ्गुलिके नीचे कमल ६ ताके नीचे पताका सहित ध्वजा ७ ताके नीचे वल्ली ८ फूल ९ कनिष्ठा के तले अंकुश १० एडीमें अर्द्ध चन्द्र ११ ये दाहिने चरणमें अँगूठा के मूलमें शङ्ख १ ताके नीचे गदा २ कनिष्ठाके नीचे वेदी ३ ताके तले कुण्डल ४ ताके नीचे शक्ति ५ तर्जनी अङ्गुली तले पर्वत ६ पर्वतके नीचे रथ ७ एडीमें मत्स्य ८ ये सब १९ चिह्नकी चरणरेखा देख दुःखित होके बोलती भयीं ये कौनके चरण चिह्न हैं जो नन्दके बेटाके कंधेपर प्रकोष्ठ धरकेगई जैसे हथिनी हाथीके संग। अब यहां तीन प्रकार के गोपीन के वाक्य हैं—पहिले सपक्षा अर्थात् राधाकी पक्षवारी, भगवान् हरि ईश्वर याही करके आराधित भये अथवा वशीभूत भये। जा कारण सबकों छोड़के गोविन्द प्रसन्न होके ताकों एकान्त में लेगये। अथवा विपक्षवारीन से संबोधन देके कहैं हैं—हे अनयाः! अर्थात् नीति नहीं जानो भगवान् हरि ईश्वर राधाकों प्राप्त

१–श्रीमद्भागवते–वध्वाः पदैः सुप्रक्तानि विलोक्यार्ताः समब्रुवन्।

२–श्रीमद्भागवते–कस्याः पदानि चैतानि याताया नन्दसूनुना। अंसन्यस्तप्रकोष्ठायाः करेणोः करिणा यथा॥

३–श्रीमद्भागवते–अनयाराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः। यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो या मनयद्रहः॥ नूनम् अयं हरिः 'राधितः' राधाम् इतः—शकन्ध्वादित्वात् पररूपम्। राधयति आराध्यते वा राधा॥

भये आराधन करैं अथवा कृष्ण जा करके वाञ्छापूर्तिरूप आराधना से आराधित भये तासे राधा नाम भयो। शुकदेवजी के मुख से युक्ति से नाम निकशे। 'ब्रह्मवैवर्त' में स्पष्ट लिखो है। 'राधासुधानिधि' में या नामको विवरण सुनो—जो श्रीराधा प्रौढ अनुराग के उत्सव से व्रजके मणि प्यारेको आराधन करै। जाके आश्रयमात्र से श्रीकृष्ण से सख्यभाव की उत्कण्ठा करनवारे सिद्ध होजायं। और सबके आराधन के अन्त में जो एक रसवती परमा सिद्धि सो श्रीराधा श्रुतिन की मस्तकशेखरलतानाम्नी मेरे ऊपर प्रसन्न होयं। या श्लोक में अनेक विभक्ति राधानामकी हैं। राध,साध,—धातु संसिद्धिके विषय हैं कृष्ण को आराधन करैं वशी करैं सो 'राधा' यह प्रथमा विभक्ति, सखा जाके सकाशात् से सिद्ध होय यह पञ्चमी, जा करके हरि आराधन कियेगये यह तृतीया, जाके विषय सब सिद्धि यह सप्तमी विभक्ति वेदशिरोमङ्गल—भूषणापीड़ लताकूप नाम की जो श्रुति तिनकी शेखर नाम स्वामिनी; सारस्वत कल्प में श्रुति गोपी भयीं और सब गोपीन की स्वामिनी श्रीराधा हैं। व्रजनवतरुणिकदम्ब मुकुटमणि राधा यह श्री'हरवंश' गोस्वामीने कह्यो यह हरलाल व्यास की टीका है। जो श्रुति सगुण निर्गुण ब्रह्मको वाक्य से

१—'राधासुधानिधौ'—या वा राधयति प्रियं व्रजमणिं प्रौढानुरागोत्सवैः संसिध्यन्ति यदाश्रयेण हि परं गोविन्दसख्युत्सुकाः। यत्सिद्धिः परमा पदैकरसवत्याराधनान्ते न सा श्रीराधा श्रुतिमौलिशेखरलतानाम्नी मम प्रीयताम् ॥ 'राधसाध संसिद्धौ' धातुः अकर्मको दिवादिगणः। राधयति प्रियमिति 'राधा' साधयति वशीकरोति वा प्रथमा, गोविन्दसख्युस्थुत्सुका यस्या राध्यन्ति सिध्यन्ति—पञ्चमी राध्यते 'अनया तृतीया' या परमा सिद्धि स्तदा राध्यति अस्यामिति सप्तमी ॥

प्रतिपादन करैं सो मूर्तिमती होके श्रीराधा की चरणसेवा करैं ॥

और भी महिमा लिखी है—जो राधा—नाम जप करवेसे गोकुलपति आकर्षण होजाय, जा राधा—नाम के आगे समस्त पुरुषार्थ में तुच्छता घटै, जा नामको मन्त्र प्रीतिसे माधव आप जपें, वे राधा नामके अद्भुत वर्णद्वय मेरे हृदय में स्फुरित होयं। और भी श्रीमुखके वाक्य हैं। राधा को रकार उच्चारण करै ताकों उत्तम भक्ति देंदेव और जब धकार उच्चारण करै तो सुनवेके लालचसे मैं पीछे पीछे डोलों हों। यह राधा—नाम की महिमा कही ॥

अब तटस्था नाम सख्यकी बोली—अहो आलियो! ये गोविन्दके चरणकमलकी रेणु धन्य है जाकों ब्रह्मा महादेव रमादेवी पाप दूर करवेकों मस्तकपर धरैं ॥

विपक्षा बोली—ताके ये चरण हमको अतिक्षोभ करै हैं जो एकली गोपिन को भाग हरके अच्युत को अधरामृत एकान्त में भोगे है। अब आगे शुकदेवजी गोपिनके ही मुखसों सौभाग्य वर्णन करावैं हैं। एक बोली—निश्चय करके अन्यत्र वधूके चरण नहीं दीखैं हैं। कोमल

१—'राधासुधानिधौ'—यज्जप्तं सकृदेव गोकुलपतेराकर्षकं तत्क्षणादूयत्र प्रेमवतां समस्तपुरुषार्थेषु स्फुरेत्तुच्छता। यन्नामाङ्कितमन्त्रजापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः श्रीकृष्णोऽपि तदद्भुतं स्फुरतु मे राधेति वर्णद्वयम् ॥ इति।

२—'ब्रह्मवैवर्ते'—रा—शब्दं कुर्वते राधा ददानि भक्तिमुत्तमाम्। धा—शब्दं कुर्वतः पश्चाद् व्रजामि श्रवणलोभितः'।

३—४श्रीमद्भागवते—'धन्या अहो अमी आल्यो गोविन्दाङ्घ्र्यब्जरेणवः। यान् ब्रह्मेशो रमादेवी दध्युर्मूर्ध्न्यघनुत्तये' ॥ तत्रैव—'तस्या अमूनि नः क्षोभं कुर्वन्त्युच्चैः पदानि यत्। एकापहृत्य गोपीनां रहो भुङ्क्तेऽच्युताधरम्'।

५—न लक्ष्यन्ते पदान्यत्र तस्या नूनं तृणाङ्कुरैः। खिद्यत्सुजाताङ्घ्रितलामुन्निन्ये प्रेयसीं प्रियः' ॥

चरण तृण अङ्कुर करके खेदकों प्राप्त भये, प्यारे ने अतिशय प्यारी कों गोदलीनी। आगैं बोली—यहां प्यारे ने प्यारी अर्थ फूल बीने तासे एडी के नीचे चिन्ह नहीं हैं। यहां कामीने कामिनीके केश सँवारे और चोटीमें फूल गूंथे। यहां निश्चय बैठे हैं। अब शुकदेवजी कहैं—आत्माराम आत्मरत ताके संग अखण्डित विहार करते भये। 'रेमे' क्रिया आत्मनेपद है अपने सुखके अर्थ विहार कियो। यह एक रात्रिके उपलक्षण से सदा सदा को विहार है। फिर वे ईर्षाभरी गोपी बोली—का वही बडी प्रेमवारी है जो हमको छोडके वाको संग लेगये। भगवान् प्यारीको अपने में प्रेमकी अधिकता दिखायबेको विचार करते भये कि मेरे से भले ही घड़ी दो घड़ी को वियोग होजाय पर यह जताऊं कि हां तुम भी मेरे विरह में व्याकुल फिरोहो पर इनकी किंचित् वियोग में का दशा होय है या कौतुक के अर्थ प्यारीके नजर ओट होगये। वस्तुतः वहां ही रहे वियोग होते ही 'हा नाथ! हा रमानाथ! कहां हो कहां हो हे महाभुज! हे सखे! मोकों दर्शन देव' ऐसें कहिके मूर्च्छित होगयी। वे गोपी ढूंढती भयी आईं। प्यारीकों गोदमें ले दशा देख अचम्भे में रह गईं। फिर सब गोपिन कों विरहव्याकुल देखके आप प्रगट होके अपनो अपराध क्षमा करावते भये। कोई ऐसें शंका करैं कि ऐसी प्यारी गोपि-

---

१–अत्र प्रसूनावचयः प्रियार्थे–प्रेयसा कृतः। प्रपदाक्रमणे एते पश्यता सकले पदे॥

२–भागवतें–केशप्रसाधनं त्वत्र कामिन्याः कामिना कृतम्। तानि चूडयता कान्तामुपविष्टमिह ध्रुवम्॥

३–तत्रैव रेमे–तया चात्मरत आत्मारामोऽप्यखण्डितः। कामिनां दर्शयन्दैन्यं स्त्रीणां चैव दुरात्मताम्॥

न कों छोडके अन्तर्धान होके कैसे कष्ट दियो और मथुरा कैसे गये। सो रासमें अन्तर्धान होवे को यह कारण वर्णन कियो और उनके प्रेमकी ध्वजा फहरायवे के अर्थ कि ऐसे कष्टमें भी मोकों नहीं छोडै, उनकों जितायके आप महाऋणी होते भये। और नित्य उनके पास रहिके भी आभासमात्र जो मथुरा गयेको विरह दिखायो सोभी यह ही प्रयोजन (कि) विरह भक्ति प्रकट करवे के लिये। इतनो श्रीराधाके सौभाग्य को चरित्र 'भागवत' में वर्णित है। शुकदेवजी श्रीराधा की सखी हैं। वे अपनी स्वामिनी को चरित्र कैसे न वर्णन करैं। 'संमोहनी तन्त्र' में लिख्यो है-पहिले कल्पमें व्यासजी दीर्घतपा नाम के मुनि होते भये तिन के पुत्र को मुनि ने 'शुक' नाम धर्यो। काहे से कि जन्म लेते ही बालक जब उनको पढावैं तो कृष्णनाम अङ्कित श्लोक स्पष्ट सुन्दर उच्चारण करैं। यह आश्चर्य

१-'संमोहनी तन्त्रे'-मुनिर्दीर्घतपा नाम व्यासोऽभूत्पूर्वकल्पके। तत्पुत्रः शुक इत्याख्यां लेभे मुनिवरैः कृताम् ॥ जातमात्रस्तु यो बालैः पाठ्यमानस्तदाश्रमे। व्यक्तमन्ववदत् श्लोकं कृष्णनामाङ्कितं शुभम् ॥ तदाश्चर्यं समालोक्य सर्वे संजातविस्मयाः। शुक इत्येव तं प्रोचुः शुकवत्पठितं यतः ॥ सोऽपि बालो महाप्राज्ञस्तद्देवानुस्मरन् पदम्। विहाय पितृमात्रादि कृष्णं ध्यात्वा वनं गतः ॥ स तत्र मानसैर्दिव्यैरुपचारैरहर्निशम्। अनाहारोऽर्चयद् विष्णुं गोपरूपिणमीश्वरम् ॥ रमया पुटितं मन्त्रं जपन्नष्टादशाक्षरम्। दध्यौ परमभावेन हरिं हेमतरोरधः स कल्पान्ते तनुं त्यक्त्वा गोकुलेऽभून्महात्मनः उपनन्दस्य दुहिता नीलोत्पलदलच्छविः। सेयं श्रीकृष्णदयिता पीतशाटीपरिच्छदा ॥ रक्तचोलकया छन्ना शातकुंभवटस्तनीङ्गदधानी रक्तसिन्दूरसर्वांगस्यावकुंठिनी ॥ कर्णकुण्डलनिर्भातगंडदेशा शुभाननाऽस्वर्णपंकजमालायां कुंकुमालिप्तसुस्तनी ॥ यस्या हस्ते च वंशीयं दृश्यते हरिणार्पिता ॥ वेणुवाद्येऽतिनिपुणा केशवस्यातितोषणी ॥ कृष्णेन चातितुष्टेन कदाचिद्रासपूरणे ॥ विन्यस्या कम्बुकण्ठेऽस्या भाति गुञ्जावली शुभा ॥

परोक्षे चापि कृष्णस्य कृष्णकान्तास्मरार्दिता ॥ सखीभिर्गाययन्तीभिर्गायन्ती सुस्वरं स्वयम्। वर्तयेत्प्रियवेषेण वेषयित्वा वधूमिमाम् ॥ वारं वारं च गोविन्दं भावेनालिङ्ग्य चुम्बति प्रियासौ सर्वगोपीनां कृष्णस्याप्यतिवल्लभा ॥

देखके सबकों विस्मय भयो । तोता की तरह पढैं तासे शुकनाम सब बोलते भये सो बालक महाबुद्धिमान् वही पद को स्मरण करत कृष्ण को ध्यान करके माता पिताकों छोड़ बनमें गयो । तहां सुन्दर दिव्य मानसी उपचार से विना भोजन दिन रात गोपरूप ईश्वर विष्णु को अर्चन करते भये । रमापुटित अष्टादशाक्षर मन्त्र जपके सुवर्ण के वृक्षके नीचे परम भावसे हरिको ध्यान करते भये । सो कल्पके अन्त में तन त्याग करके गोकुलके उपनन्द के घरमें तिनकी बेटी होते भये । नील कमलदल की छविवत् अङ्गकी कान्ति भयी सो यह श्रीकृष्णको प्यारी पीरी शाटी लालचोली पहिरें सुवर्ण के घट समान स्तन लाल सिन्दूर धारण करैं कानन में कुण्डल कपोलन पर झांई जिनकी सोनेके कमल की माला पहिरे कुंकुमालिप्त विराजें हैं जाके हाथ में हरिने बंसी दीनी वेणु बजायके हरिकों तोषण करे, जब गान पूर्ण ह्वैगयो तब कृष्णने अति प्यार से कण्ठ की गुञ्जावली याके कण्ठ पहिराई सो प्रकासै हैं। कृष्ण जब पास न होय तब कृष्णकान्ता कामकी पीडित जब इनसे गवावैं तब सुन्दर स्वरसे कृष्णगुण गावैं और श्याम रूप के कारण से कृष्ण वेष सजायके इनको नचावैं और इनकों गोविन्द के सांवरे भाव करिके आलिङ्गन करैं चुंबन करैं तासे ये सब गोपिन की प्यारी और कृष्णकी अतिवल्लभा हैं ।

अब पांचवों विशेषण सखीसहस्र नाम हजारन अनगिनती सब ओर से सदा सेवा करैं तामें सहस्रपत्र को जामें विस्तार ऐसे कमलाकार वृन्दावन में अपने अधिकार तें मुख्य सखीन को पृथक् २ दल दल में ध्यान करै ।

वृन्दाभक्ति प्यारी शक्ति सब जन्तुकी प्रकाश करेववारी ये श्रुति है—वृन्दाके भक्तिरूपतासे सब यूथन में रहनवारी ताकी उपकृति की गोचर हैं। पहिले पूर्व कर्णिका में श्रीललितादेवी राधिका की प्यारी सखी को चिन्तवन करै। विशोक शारदीकी बेटी गोरोचन की सी अङ्गन की कान्ति मोरपंखवत् वस्त्र प्रसन्नमुख सन्धि केलिमें निपुण प्रखरा चारु बोलनवारी दिन रात हित की चाहनवारी बीड़ी की सेवा करैं तिनको चिन्तवन करै इनकी आज्ञा उठावनवारी ८ मुख्य सखी अपनी क्रियाके आश्रयवारी हैं तिनके नाम १ रत्नप्रभा, २ रतिकला, ३ शुभा, ४ भद्रसौरभा, ५ सुमुखी, ६ मन्मथामोदा, ७ कलहंसी, ८ कलापिनी, इनको, ध्यान करै ॥

१—'सुधर्माध्वबोधे'— स्वाधिकारात्सखीमुख्या ध्यायेद्दलेदले पृथक्। सहस्रपत्रावस्थासे वृन्दावने कञ्जाकृतौ ॥ वृन्दा भक्तिः प्रियाशक्तिः सर्वं जन्तुप्रकाशिनी। इति श्रुतेश्च वृन्दाया भक्तिरूपतयाखिलाः। पारम्पर्याश्च यूथस्थास्तदुपकृतिगोचराः ॥ विशोकशारदीपुत्रीं प्रखरां चाटुवादिनीम् ॥ गोरोचनरुक् चार्वाभां केकिपिच्छाभवाससम्। पुरःस्थितां प्रसन्नास्यां सन्धिकेलिविशारदाम् ॥ अहर्निशं हितैषिणीं ताम्बूलाधिक्रियायुताम्। चिन्तयेच्छ्रलितां देवीं राधिकायाः प्रियां सखीम् ॥ अस्याः सख्यश्च सन्धेयाः पृथगाधिक्रियाश्रिताः। रत्नप्रभा रतिकला शुभाथ भद्रसौरभा ॥ सुमुखी मन्मथामोदा कलहंसी कलापिनी। रमास्त्वष्टौ सखीमुख्या ललिताज्ञानुवर्तिनीः ॥ पावनदाक्षिणापुत्रीं कृष्णप्रियाप्रियां सखीम्। मध्या तारावलीवस्त्रां विद्युद्गौरीं वयःसमाम् ॥ सामदानैश्च भेदैश्च निपुणां स्निग्धमानसाम्। सूर्याराधनसामग्रीचित्रवस्त्राधिकारिणीम् ॥ राधासख्यस्फुरत्स्वास्यां विशाखां चिन्तयेत् सुधीः। अस्याः सख्यस्तथा ध्येयाः पृथगाधिक्रियायुताः ॥ माधवी मालती चैव गन्धरेखाथ कुञ्जरी। हरिणी चपला चैव सुरभीच शुभानना ॥ विशाखानुगताह्यष्टौ मुख्याश्च यूथनायिकाः। मध्या प्राप्ततनूद्भूतां राधिकायाः प्रियां सखीम् ॥ नीलपद्माम्बरधरां चम्पवर्णां सुदूतिकाम्। वादिकां चम्पकलतां पाकक्रियाधिकारिणीम् ॥ अस्याः सख्यस्तथा ध्येयाः पृथगाधिक्रियाश्रयाः ॥

फिर पावनदाक्षणकी बेटी श्रीराधाकी प्यारी सखी विशाखाजी सुमुखी अग्निदिशा की कर्णिका (दक्षिण पूर्व) में समान वयस बिजलीसदृश गौरी मध्या तारावली के वस्त्र साम दान भेद में निपुण स्निग्धमन सूर्य पूजा की सामग्री विचित्रवस्त्र सेवा को जिनको अधिकार तिनको चिन्तवन करै। इन की आठ सखी न्यारी न्यारी क्रियावारी तिनको ध्यानकरे १ माधवी, २ मालती, ३ गन्धरेखा, ४ कुञ्जरी, ५ हरिणी, ६ चपला, ७ सुरभी, ८ शुभानना ये आठ हैं। फिर आसतनु की बेटी श्रीराधिकाकी प्यारी सखी नील वस्त्र पहिरें चंपाको सो वर्ण सुन्दर द्युति पाक नाम रसोई की अधिकारिणी मध्या दक्षिण कर्णिका में चंपकलता तिनको ध्यान करै। इनकी ८ मुख्य सखी हैं १ कुरंगाक्षी, २ सुचरिता, ३ मणिकुण्डला, ४ मण्डिनी, ५ चान्द्रिका, ६ चन्द्रलतिका, ७ कटुकेक्षणी, ८ सुमन्दिरा ये हैं। चौथी चार्विषा की पुत्री कृष्णकी प्यारी सखी कोमल ज्योतिष शास्त्र, पशुविद्यामें निपुण कुंकुमवत् अङ्गकी कान्ति सुव-

---

१—कुरङ्गाक्षी सुचरिता तृतीया मणिकुण्डला। मण्डिनी चन्द्रिका चन्द्रलतिका कटुकेक्षणी॥ चम्पलतानुगाः सप्त चाष्टमीयं सुमन्दिरा। चार्विषाञ्चतुरसुतां राधाकृष्णप्रियां सखीम्॥ मृद्वीं ज्योतिष्षु शास्त्रेषु पशुविद्याविशारदाम्। कुङ्कुमाभव पुर्भ्राजद्दुकूलकनकोपमाम्॥ पानकाद्यसुसामग्रीगन्धतोयाधिकारिणीम्। लसन्तीं राधिकापार्श्वे स्फुरन्तीं सख्याविश्रुताम्॥ चित्रां, राधासखीं ध्यायेत् सस्मितां हितचिन्तकाम्। अस्याः सख्यस्तथा ध्येयास्तत्तदधिक्रियान्विताः। रसालिका तिलकिनी, शौरसेनी सुगन्धिका। रामिला कामनागर्या नागरी नागवणुका॥ इमाश्चित्रानुगा ह्यष्टौ विख्याता यूथपुङ्गवाः। सुमलयजकर्पूरकुङ्कुमाभा वरङ्गी वलयवलितहस्ता पाण्डुवस्त्रा सुकेशी। पठितसकलशास्त्रा साधुसङ्गीतविद्याकचिरतनुसखीयं कृष्णचन्द्रप्रियायाः॥ खलुजनकजनन्यौ पुष्करः सुभ्रुवोऽस्या युगलरतहरो मेधोदरीपक्ष्मलाक्ष्याः। प्रखरवचनलीना पाणिवीणाप्रवीणा ह्यधिकृतिहितसिन्धुस्तुङ्गविद्याविचिन्त्या॥

णतुल्य जिनके वस्त्र पान करिवेकी सामग्री सुगन्धित जलकी अधिकारिणी श्रीराधिकाके निकट में विराजमान विख्यात नैर्ऋति कर्णिका दक्षिण पश्चिम में जो चित्रासखी तिनको ध्यान करै। मन्द मुसक्यान युक्त युगलके हितकी चिन्तक उनकी ये आठ सखीहैं १ रसालिका, २ तिलाकिनी, ३ सौरसेनी, ४ सुगन्धिका, ५ रामिला, ६ कामनागरिया, ७ नागरी, ८ नागवेणुका। फिर पश्चिम कर्णिका में तुंगविद्याको चिन्तवन करै। चन्दन कपूर कीसी सुगन्धि कुंकुमवत् अंग कड़ा हाथ में ऊजरे वस्त्र सुन्दर केश सब शास्त्र संगीत विद्या जानै कृष्णचन्द्रकी प्यारी सखी पुष्कर व सुभ्रू जिनके माता पिता युगल में हृदय की रति पतरी कमर नु कीली आ-

---

अस्यां सख्यो विचिन्त्याश्च पृथगधिक्रियाभृतः। तुङ्गविद्यानुगा मुख्या मञ्जुमेधा सुमेधिका ॥ स्वाधिकारात्प्रहृष्टात्मा सुमध्या मधुरेक्षणा। तनुमध्या मधुस्पन्दा गुणचूडा वराङ्गदा ॥ लेलासागरतनया राधःसखी सुशोभना। स्नेहरसद्रवद्गात्रा प्रेय स्पतिसुखावहा ॥ हरितालनिभ. श्यामा दाडिमीपुष्पवाससा। कोक्शास्त्रे वशीकर्तुशक्तिका कोशलाधिका ॥ राधिकाप्रियकृत् सख्याः सौभाग्ययन्त्रलेखिका। इन्दुलेखा यथा ध्येयाचामा प्रखरदूतिका। अस्याः सख्यस्तथा ध्येयाः पृथगधिक्रियावहाः तुङ्गभद्रा रसोत्तुङ्गा गावचर्या सुमंगला ॥ चित्रलेखा विचित्रांगी मोदिनी मदिरालसा। यूथमुख्या इक्षं ज्ञेयमिन्दुलेखानुकृत्यकृत् ॥ पद्मकिंजल्कवर्णाभजपापुष्पाभवासली करुणा रंगसाराख्या पितृभ्यां जन्मनीयषी॥ अनुलेखाक्रियाभिज्ञा कनिष्ठा सप्तभिर्दिनैः॥ राधिका कृष्णयोः प्रेष्ठा तिष्ठतो रंफयालया ॥ राधाकृष्णास्यसंदृष्टिः कृष्णकटाक्षगोचरा ॥ वाम भागे स्थिता मध्या सिद्धिमौक्तिकजलिपका॥ रंगदेवी रसद्रावा लसती राधिकांतिके ॥ अस्याः सख्यस्तथाध्येयाः ॥ स्वाधिकाप्रहर्षिताः ॥ कलकंठी शशिकला कमलामधुरेन्दिरा ॥ कंदर्पसुन्दरी कामलतिका प्रेममंजरी ॥ यूथमुख्याष्टसख्यस्ता रंगदेव्यनुकृत्यकृत ॥ सुदेवी रङ्गदेव्यास्तु यमाभाः सा कनीयसी। रूपादिभिः समा स्वस्रा तद्वातिभरकारिणी ॥ ज्येष्ठान्वयसुविख्याता मृदुश्री राधिकासखी। शुकसारिकापठज्ञा कन्दुकाक्षेपभाजना ॥ केशसंस्थाञ्जनादिभ्यः शकुनाख्यानवित्तमा। ध्येयाश्चास्याः सखीमुख्याः स्वाधिकाराक्रियादृताः कावेरीचारुकवरी मञ्जुकेशी सुकेशिका। हारिहीरा महाहीरा हारकंठी मनोहरा॥ सुदेव्यनुगता मुख्या ह्यष्टौ ता यूथनायिकाः। एवं वृन्दादयः सर्वाः कोटिशो यूथनायिका! ॥ वर्णाभरणभूषाढ्या ध्येया ह्यधिक्रियानुगाः। हरिणी हारिणी हीणा हरिताभिः स्खलद्गिरा ॥ ब्रह्मरात्रे मुहूर्ते तु स्तूयमानौ प्रियाप्रियो मुग्धा-स्निग्धा विदग्धाभिरसंदिग्धकया तथा। ...

ख़ें प्रखर वचन हाथ में वीणा बडी प्रवीन हितकी सिन्धु ऐसी तुङ्गविद्या को चिन्तवन करै। इनकी सखी अलग अलग अपनी क्रिया के आश्रय मुख्य मञ्जुमेधा सुमेधिका इन को स्मरण करै। ताके परे अपने अधिकार में हर्षित मन सुमध्या मधुर चिन्तवन सूक्ष्म कमर मधुस्पन्द गुणन में श्रेष्ठ बाजूबन्ध पहिरे वेलासागर की बेटी श्रीराधाकी सखी सुशोभना स्नेह के रससे गात्रद्रवीभूत अतिशय प्यारी सुख देवे वारी हरितालको सो रंग सुंदरी अनार के फूलको सो रंग वस्त्रको कोकशास्त्र से वशी करवेकी शक्ति कोशकी साधिका वामा प्रखरदूतिका सौभाग्य यन्त्र की लिखनेवारी इन्दुलेखाजी को वायुकी दिशा पश्चिम उत्तर की कर्णिका में ध्यान करै। इनकी सखी पृथक् क्रिया करवेवाळी (को) ध्यान करै। १ तुङ्गभद्रा, २ रसोत्तुंगा, ३ गाववार्या, ४ सुमङ्गला, ५ चित्रलेखा, ६ विचित्राङ्गी, ७ मदिनी, ८ मदिरालसा, ये आठ इनके यूथकी मुख्य हैं। तासे परे कमल के केसरा सरीखा वर्ण, जपाके फूल सरीखे वस्त्र करुणा और सारंग तिन की बेटी अनुलेख क्रियाकी जाननवारी सात दिन श्रीराधिकाजी से छोटी श्रीराधा कृष्णकी अतिशय प्यारी जबदोनों अङ्कमाल करके बैठें तब राधाकृष्ण के मुखपर दृष्टि कृष्ण कटाक्षकी गोचर वामभागमे स्थित मध्या सिद्धमुक्ति अर्थात् प्रेमभक्ति की उपदेशक श्रीरंगदेवी उत्तर कार्णिका में रसकी बहावेवारी श्रीराधिकानिकट बिराजैं हैं। इनकी सखी अपने अधिकार पर बिराजैं वे ध्यान करवे योग्य हैं। १ कलकण्ठी, २ शशिकला, ३ कमला, ४ मधुरा, ५ इन्दिरा, ६ कन्दर्पसुन्दरी, ७ कामलतिका, ८ प्रेममञ्जरी, ये आठ रंगदेवी के पीछे कृत्य

करवेवाली हैं। तदनन्तर सुदेवीजी श्रीरंगदेवी की यमलबहिन रूपादिमें स्वसाके समान अतिशय कामके करवेवारी बड़ीके पीछे चलनवारी कोमल श्रीराधिका की सखी तोता मैना के पाठ की जाननवारी गेंद खेलकी पात्र केश सँवारै अंजनादि लगावै शकुनको बखान करनो अच्छोजानै उत्तर इन्द्र दिशा ईशान कर्णिका में तिनको चिन्तवन करै । इनकी सखी अपने अधिकारको काम करवेवारी ८ हैं, १ कावेरी, २ चारुकवरी, ३ मंजुकेशी, ४ सुकेशिका, ५ हारिहीरा, ६ महाहीरा, ७ हाराकण्ठी, ८ मनोहरा, ये यूथकी नायिका हैं। ऐसे ही वृन्दादिक कोटिन यूथन की नायिका वर्ण आभरण भूषणयुक्त ध्यान करवे योग्य हैं। हरिणी हारिणी हीणा हरिता इनकी स्खलित वाणीतासे रात्रिके ब्रह्ममुहूर्त में दोनों प्रिया प्रीतम की स्तुति करैं हैं ॥ मुग्धा स्निग्धा विदग्धा असंदिग्धा ये अश्रु भरे नेत्रनसे मुहूर्त भर गावैंहैं इनको ध्यान करै । वृन्दा देवी वृन्दावन की शोभा निवेदन करके राधा कृष्ण को प्रसन्न करैंहैं उनको ध्यान करै । वृन्दा देवीसे कमलके सोलह दलवारीन को वर्णन करैंहैं। यह वृन्दा देवी दक्षिण आग्नेय कोणवारे दलमें हैं फिर पावक दक्षिण दलमें चन्द्रावती जो कंप अंगसे नाना प्रकारके अद्भुत दर्शन करायके राधा

साश्राभी राधिकाकृष्णौ गीयमानौ मुहूर्त्तकम् ॥ अथ कमलस्य षोडशादले ॥ मुहूर्ते वृन्दया देव्या वृन्दावननिवेदनैः। ध्यायेत्प्रसाद्यमानौ श्रीराधाकृष्णौ निजेप्सितौ ॥ चन्द्रावत्या मुहूर्ते तु विविधाद्भुतदर्शनैः। हृष्यमाणौ सकम्पाङ्ग्या राधाकृष्णौ विचिन्तयेत् ॥ मुहूर्ते चन्द्रया सख्या किसलयस्रगर्पणैः। प्रेयस्या भूष्यमाणौ तौ ध्यारुणायितदेहया ॥ गोपाल्या च मुहूर्तं तु चित्रपट्टाङ्कितास्यया। समावलोक्यमानौ च राधाकृष्णौ फलार्पणैः ॥ श्यामलयारुणापाङ्ग्या पुष्पमालासमर्हणैः। मुहूर्तमर्च्यमानौ च राधाकृष्णौ विचिन्तयेत् ॥ चन्द्रावल्या मुहूर्तार्द्धे दक्षिणपार्श्वसंस्थया। ससख्या वेपमानाङ्ग्या समासीनौ प्रियाप्रियौ। तथा सुभद्रया श्रीमत्या मधुमत्या च हरिप्रियादिभिः क्रमात्। सेवितौ राधिकाकृष्णौ विभावयेद्विभागशः ॥

कृष्णकों हर्ष देवें उनको चिन्तवन करै। फिर वही पावक दक्षिण दलमें चन्द्रा सखी कोंपलन की माला अर्पण करके श्रीराधाकृष्णकों भूषित करैं सो मुहूर्तभर चिंतवन करै। उनकी लाल देह है। फिर मुहूर्तभर चित्रपट जैसे अङ्कित होय तैसी कान्ति जिनके अंगकी ऐसी गोपालीजी दोनों श्रीराधाकृष्णकों फल अर्पण करै और वे फलनके दर्शन करैं तिनको दर्शन कर रहीं पूर्वाग्नेय दलमें उनको ध्यान करै, तहां ही पूर्वाग्नेय दलमें अरुण कटाक्षवारी श्यामला फूलमाला भेट करके मुहूर्तभर राधाकृष्ण को अर्चन करैं सोध्यान करै। फिर पूर्वेशान दलमें चन्द्रावलीजी अपनी सखीन सहित बैठे जो राधाकृष्ण उनके दक्षिण निकटमें कंपायमान अंगसे ठाढी मुहूर्तभर उनको ध्यान करै। ऐसे ही सुभद्रा सखी को ईशान उत्तर दलमें ध्यान करै तथा रोहिणी धनिष्ठादिको स्मरण करै। सुदेवी मुग्धादि पर्यन्त आठ दल की हैं, पीछे सोलह दलवारी हैं श्रीमती मधुमती हरिप्रियादिक से क्रम करके सेवित श्रीराधाकृष्ण तिनको ध्यान करै। यह संप्रदायसम्मत सिद्धान्त 'सुधर्माध्वबोध' के अनुसार लिखो गयो और इनके आश्रय की वनिता शत यूथप 'श्रीमद्भागवत' में सहचरी मंजरी लिखी हैं इन सबके पांच प्रकार के भेद हैं—१सखी, २ नित्यसखी, ३ प्राणसखी, ४ प्रियसखी, ५ परमप्रेष्ठा सखी, । जिनको कृष्णमें स्नेह सो सखी, जिनको श्रीराधिकामें स्नेह अधिक सो नित्यसखी, और जो मुख्य सखीनमें स्नेह अधिक करैं सो प्राणसखी, और जो श्रीराधाके सारूप्य कों प्राप्त भई सो प्रियसखी इनमें मुख्य श्रीललिता विशाखादि आठ वे परम

प्रेष्ठ सखी इनको यद्यपि श्रीराधाकृष्णमें बराबर स्नेह है तब भी श्रीराधाको ही पक्षपात करैं हैं ॥

अब व्रजमें जो रासकी रात्रिको सौ यूथन की पालन-वारी गोपी इकठ्ठी भई उनको ब्यौरा वर्णन करैं हैं। 'गोपीन को श्रुतिरूप जानो' ऋषिन की कन्या देवतनकी कन्या जानो हे राजेन्द्र! । ये मानुषी नहीं हैं' यह पद्मपुराणमें लिखो है तामें गोपी जो नित्यसिद्धा हैं वे सदाकी प्यारी हैं। और सब साधन करके सिद्ध भई तामें ऋषिकन्या में प्रमाण—'पाद्मे' उत्तरखण्ड में—पहिले महर्षि सब दण्डकारण्य के वासी सुन्दर श्रीरामचन्द्रको देखके भोग करिवेकी इच्छा करते भये। वे सब स्त्री होके गोकुलमें प्रगट होते भये। काम-भाव से हरिको पायके संसार समुद्र से तरते भये तैसे ही श्रुतचरी 'बृहद्वामनपुराण'में लिखीहै—'कन्दर्प कोटिसे भी सुन्दर तुमको देखके हमारे मन कामिनीभावसे क्षोभको प्राप्त भये जैसे तुह्मारे लोककी वासिनी तुह्मारे साथ विहार करैं हैं सोई हमारे इच्छा है' ॥ नित्यसिद्धा गोपिनको कोई साधन नहीं है कात्यायनी पूजा केवल लोकसंग्रह है। इन सब में कोई मुग्धा (भोरी) हैं, कोई मध्या (बीचकी) हैं, कोई प्रगल्भा (ढीठ) हैं। प्रेमके तारतम्यसे भी उत्तम

१–'पाद्मे'—'गोप्यस्तु श्रुतयो ज्ञेया ऋषिजा गोपकन्यकाः। देवकन्याश्च राजेन्द्र न मानुष्यः कथंचन' इति।

२–'पाद्मे उत्तरखण्डे'—'पुरा महर्षयः सर्वे दण्डकारण्यवासिनः। दृष्ट्वा रामं हरिं तत्र भोक्तुमैच्छन् सुविग्रहम् ॥ ते सर्वे स्त्रीत्वमापन्नाः समुद्भूताश्च गोकुले। हरिं संप्राप्य कामेन ततो मुक्ता भवार्णवात्' इति।

३–'बृहद्वामने'—'कन्दर्पकोटिलावण्ये त्वयि दृष्टे मनांसि नः। कामिनीभावमासाद्य स्मरक्षुब्धान्यसंशयः ॥ यथा त्वल्लोकवासिन्यः कामतत्त्वेन गोपिकाः। भजन्ति रमणं मत्वा चिकीर्षाजनि नस्तथा' ॥

मध्यम कनिष्ठ तीन प्रकार की हैं। ये गोपी मनुष्यलोक में रहिके भी विष्टामूत्रपूरितदेहत्वचा चर्म केश डाढी मूछ रोमादि मसाला वारी नहीं हैं। सच्चिदानन्दविग्रह हैं। भगवान् के साथ प्राकृतन की रमणयोग्यता कैसे होती। जिनकी देहमें कुछ प्रकृति को अंश रह्यो वेणु बजायके जा समय वृन्दावनमें बुलाईं उनको पतिनके रोकवेसे देहत्याग लिख्यो है। कुब्जाको भी अप्राकृतपनो सिद्ध है। मथुराके बजार में चन्दन लगाती समय मुक्ति के दाता मुकुन्दने स्पर्श करी तो पारस लोहकी तरह प्रमदोत्तमा नाम अप्राकृत देहवारी होगई जैसे ध्रुवजीको वही शरीर हिरण्यमय नाम अप्राकृत होजातो भयो और वाही शरीर से विष्णुलोक को गये। पर गोपिनको ध्रुव कुब्जा समान न समुझनो इनको विलक्षण प्रभाव है। 'श्रीमद्भागवत' में—लिख्यो है कि तिनके माया के शोक सबधुइगये, तिनके साथ भगवान् अच्युत की अधिक शोभा होती भयी जैसे पुरुषकी शक्ति से शोभा होय। लक्ष्मीजी से स्वर्गकी स्त्रीनसे और सब से इनकी श्रेष्ठता है और इनको श्रीकृष्णमें ममतामय भाव है। कात्ययनी से प्रार्थना करी है कि हे कात्यायनी देवी! नन्द के बेटा हमारे पति कर। वेणुगीत में श्रीकृष्ण को अधरामृतः गोपजातिपने से अपनो बतायो है—उनको आर्य अर्थात् नन्द सुसर के बेटा जानै। गोपिन को श्रीकृष्ण के

१–२–३ 'श्रीमद्भागवते'—ताभिर्विधूतशोकाभिर्भगवानच्युतो वृतः। व्यरोचताधिकं तात पुरुषः शक्तिभिर्यथा। तत्रैव—'नायं श्रियोऽङ्ग नितान्तरतेः' इति तत्रैव। 'कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधीश्वरि। नन्दगोपसुतं देवि पतिं मे कुरु ते नमः'॥

साथ सदा सर्वदा नित्य विहार है सोई ब्रह्माजीने अपनी संहिता में लिख्यो है—'आनन्दचिन्मय रसकी प्रतिभावित अपने रूपकी कला ऐसी गोपिन के साथ अपने गोलोक में गोविन्द आदि पुरुष निवास करैं हैं। चिन्तामणिसमूह के जहां घर लाखन कल्पवृक्ष जहां लगे गैय्यानकों जहां पालन करै हजारन लक्ष्मीरूप गोपी जिनकी सेवा करैं ऐसे आदिपुरुष गोविन्द को भजन करो, तासे गोपी नित्य प्रेयसी है। प्रगट व्रजलीला में भी सुखावेश से श्रीशुकदेवजी ने गोपिन को श्रीकृष्ण रूप बतायो है और अधोक्षज की प्यारी तथा कृष्णवधू वर्णन करी है। प्रगट लीला ही में संबन्ध ठीक है अप्रकट प्रकाशको तो कहनों कहा। 'श्रीमद्भागवत' में भी—रमा के ईश व्रजसुन्दरिनके साथ ऐसे रमण करते भये जैसे बालककों अपने प्रतिबिम्ब में विभ्रम होय (तैसेही) भगवान् अपनी माधुरी गोपिन में धरके अनुभव करते भये गौतमीय तन्त्र के विषय अष्टादशाक्षर मन्त्र की व्याख्यामें वा मन्त्र के द्रष्टा श्रीनारदजीने श्रीगोपाल कों गोपालीपति वर्णन कियो यथा—गोपी कों प्रकृति जानौ, जन तत्त्व समूह

१–२ 'ब्रह्म-संहितायाम्'—'आनन्दचिन्मयरसप्रतिभावितामिस्ताभिर्य एव निजरूपतया कलाभिः। गोलोक एव निवसत्यखिलात्मभूतो गोविन्दमादि पुरुषं तमहं भजामि'। तत्रैव। चिन्तामणि प्रकरसद्मसु कल्पवृक्षलक्षावृतेषु सुरभीरभिपालयन्तम्। लक्ष्मीसहस्रशतसंभ्रमसेव्यमानं गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि' ॥

३—श्रीमद्भागवते रासपञ्चाध्याय्याम्—रेमे रमेशो व्रजसुन्दरीभिर्यथार्भकः स्वप्रतिबिम्बविभ्रमः ॥

४—यथा गोपीति प्रकृतिं विद्याज्जनस्तत्त्वसमूहकः। अनयोराश्रयत्वेन कारणत्वेन चेश्वरः ॥ सान्द्रानन्दपरं ज्योतिर्वल्लभेन च कथ्यते'

हैं इन दोनों को आश्रय व कारण तासें ईश्वर सान्द्रानन्द परम ज्यौति वल्लभ कह्योजाय है। अथवा गोपिनकों प्रकृति जानौ, जन ताको अंशमण्डल है इन दोनों को वल्लभ स्वामी कृष्ण नाम को ईश्वर होय। अनेक जन्मकी सिद्ध गोपी तिनके पति नन्दनन्दन त्रिलोकी के आनन्द बढावनवारे वर्णन किये हैं। अनेक जन्म गोपिनके कृष्ण अवतारवत् जाननो। अनादि काल परम्परा से श्रुति पुराण मन्त्रादिमें गोपिन को अवतार वर्णन कियो है तापिनी में श्रुति भी है जो गैय्यानमें तिष्ठै जो गौपालन करै जो गोपन में तिष्ठै जो सब वेदनमें तिष्ठै जाकों सब वेद गावैं सो तुह्मारो स्वामी होय यह गोपीन प्रति दुर्वासाजी को आशीर्वाद है। युगान्तर में इन प्यारिनके गोत्रप्रवर्तक गोपन कों वरदान भी है। श्रीविष्णु भगवान् ने पद्म पुराणके सृष्टिखण्ड में कह्यो है—जब नंदादिक पृथ्वीके तलपर अवतार लेयगे तब तिनमें मैं बसौंगो, तुह्मारी कन्या सब मेरे साथ रमण करैंगी तामें कुछ दोष रोष मत्सरता न होयगी। या प्रकार गोपी श्रीकृष्ण की सर्व कालकी प्रेयसी हैं। तुलसी के अङ्कुरदोय पत्ता होवेसे ही भगवानूकी गिनीजायगी। कोई अपने कल्याण

१—अनेकजन्मसिद्धानां गोपीनां पतिरेव वा। नन्दनन्दन इत्युक्तस्त्रिलोक्या नन्दवर्धनः' ॥

२—'योऽसौ गोपेषु गोपेषु तिष्ठति' योऽसौ गाः पालयति, योऽसौ गोपेषु तिष्ठति, योऽसौ वेदेषु तिष्ठति, योऽसौ सर्वैर्वेदैर्गीयते, स वो हि स्वामी योऽसौ भवति।

३—'पाद्मे सृष्टिखण्डे'—'यदा नन्दप्रभृतयः अवतारं धरातले। करिष्यन्ति तदा चाहं वसिष्ये तेषु मध्यतः। युष्माकं कन्यकाः सर्वा रमिष्यन्ते मया सह तत्र दोषो न भविता न च रोषो न मत्सरः' इति।

व सुख के लिये शालिग्राम के साथ विवाह कर देवै तो अतिसुन्दर तैसे गोपी जानौ । गान्धर्व विवाह प्रसिद्ध है 'ब्रह्मवैवर्त' पुराणादि में ब्रह्माको कियो सम्बन्ध है । रासमें ही सबके साथ मुख्य विवाह को रूपक ह्वैगयो। 'श्रीमद्भागवत' में पतिव्रत धर्म जो श्रीकृष्ण महाराज ने उपदेश कियो सो कोई दण्डकारण्यवासी ऋषिन की तरह जो व्रजमें पतिसम्बन्ध पायके रहती रहीं उनके उद्देश से है । और भी रहस्य है कि गोपिन को प्रेम उत्कर्ष ऐसो है कि कर्म व ज्ञानके फलकों तिलाञ्जलि देय तब पावै याके समाधान में श्रीजीव गोस्वामी गौड़सम्प्रदाय के आचार्य ने जो रहस्य 'वैष्णवतोषिणी' श्रीमद्भागवत की टीका में और 'गोपालचम्पू' में लिख्यो है सो संक्षेपसे लिखोजाय है श्रीमद्भागवत की रासपञ्चाध्यायी में शुकदेवजी ने कह्यो कि व्रजवासी श्रीकृष्ण में असूया नहीं करते भये काहे से कि योगमाया सच्चिदानन्द शक्ति तासे मोहे भये अपनी अपनी स्त्रीनकों अपने अपने निकट मानते भये । तात्पर्य यह है कि योगमायाने जिन कों व्रजलीला में आदि से सहायताको अधिकार मिल्यो है विचित्र रसमय उल्लास भरी उत्कण्ठा बढ़ावनवारी भक्तन के सुख के निमित्त सब गोपिन के बिम्ब के प्रतिबिम्बरूप छाया संज्ञा जाते ऐक्यताको संभ्रम होय रचना करी, जिनके साथ गोपन के विवाह भये और उन्हींकों अपने निकट मानते भये और कृष्ण की प्यारीन के विवाहादि कृष्णके साथ भये । वा

१-'श्रीमद्भागवते'-नासूयन् खलु कृष्णाय मोहितास्तस्य मायया । मन्यमानाः स्वपार्श्वस्थान् स्वान् स्वान् दारान् व्रजौकसः' ॥ इति ।

प्रकरण के उपलक्षणसे सब व्रजलीलामें यही सिद्धान्त है कि व्रजबासिन के साथ प्रतिबिम्ब रूपको सम्बन्ध भयो और बिम्बरूप सच्ची गोपी श्रीकृष्ण के साथ सब सम्बन्ध पावती भयीं। कृष्ण की प्यारीन को और की शय्यापर प्रवेश होनो महान् अनर्थ होय। कोई छाया भी स्पर्श नहीं कर सके जैसे रघुनाथजी की पत्नी सीताजी को रावण हरबेकी इच्छा करतो भयो तब जानकीजी अग्नि की शरण गईं। अग्नि मायासीता निर्माण करके सच्ची सीताजी अपने लोकमें लेगयो सो मायासीता रावण हर लेगयो। जब श्रीरामचन्द्र रावण मारचुके तब मायासीता अग्निमें प्रवेश भयी। अग्नि ताकों जरायके सीताजी रघुनाथजी कों समर्पण करते भये। और समाचार कहिके अन्तर्धान होगये। ऐसे ही या व्रजलीलामें योगमायाजी को कौतुक समझो। सो स्पष्ट 'गोपालचम्पू' के उत्तरार्द्ध के ३१ व ३२ पूर्णमें 'पद्मपुराण' के गद्य अनुसार लिख्यो है। जब श्रीकृष्ण दंतवक्र के मारबेकों जो 'दतिहा' ग्राम मथुरा के पूर्व दो तीन कोसपर है तहां आये। और ताकों मारके व्रजबासी नंद यशोदा सखा सखी तिनसे मिले। दो महीना प्रगट व्रजमें सबके साथ आनन्द करते भये फिर एक रूपसे 'दारुक' के साथ 'द्वारिका' में चले गये और दूसरे रूप से व्रजवासिन के साथ अप्रगट प्रकाश लीलामें विराजते भये। दो मास जो प्रगट लीला रही ताके मध्य में जो समाचार भये ताकों कहैं हैं कि एक दिन 'श्रीयशोदा' जी बोलीं कि हे 'पूर्णमासी' जी इन कृष्ण को विवाह गोपजातिमें होजाय तो

अच्छो है। 'पूर्णमासी' बोली कि राधिकादिक असाधारण जो वृषभानु आदिकी कन्या हैं उनको औरनकी तरह मत जानो उनके विवाहादि जो स्वप्नतुल्य भये सो उन के प्रतिबिम्ब मायाकल्पित स्वरूपके हैं। यह सुनके व्रजरानी 'यशोदा' व व्रजराजा प्रसन्न होके बोले कि यह बात कैसे जानीजाय। पूर्णमासी बोली मेरे उपदेश से तुम प्रातःकाल सब व्रजवासी इकट्ठे करो। फिर सब व्रजवासी इकट्ठे भये। पूर्णमासी भगवती देवी को ध्यान करती भयी। सो विष्णु की माया आठ भुजाधारी चक्रादिक आयुध लेकै आकाश पर चलवेवारे वाहन पर बैठी, देवता जाकी स्तुति करैं प्रकाशमान दर्शन देती भयी। और ऊंचो मुख करकेबोली 'सन्देह मत करो सन्देह मत करो' हे माता पिता वो मेरी बनाई भई दूसरी हैं जो व्रजवासिन की शयनमें स्थित भयीं। मैं इनको जानों मेरी भैय्या श्रीकृष्ण की अङ्गीकार करी भयी इन में कुछ दोष नहीं है मैंने ही पहिले छायारूपा जानकी रावण को देके जनककी बेटी की रक्षा करी'। फिर देवी दिशान में देख के अन्तर्धान होगई और अपनी बनाई हुई छायारूप गोपी प्रगट लावती भयी। वे प्रतिबिम्वरूपा बिम्बरूपा श्रीराधादिकनको आत्मा जानौं। फिर देवी बोली इन सबको भेद देखो यह सुनके व्रजेश्वरी आदिक स्वयं देखती भयी। मणिकों और काचकों जैसे वणिक् परीक्षा करै तैसे बिम्बप्रतिबिम्ब की परीक्षा होती भयी। फिर देवीने दोनों स्वरूप एक जगह करके दिखाये तब दूर सूर्यकी मूर्ति ताके निकट चन्द्रमा जैसे तैसे प्रतीति

होती भयी । फिर उन सब के श्रीकृष्णके साथ विवाह होते भये । और श्रीराधाकृष्ण को विवाह तो बड़ी धूम धाम से होतो भयो । यह संक्षेप से प्रसंग समाप्त कियो फिर सोई प्रस्तुत प्रसंग को कहैं हैं । आगममें शतकोटि गोपी लिखी हैं तिन में तीस कोटि गोपी श्रेष्ठ हैं । उनमें भी १६ हजार स्कन्दपुराणके प्रमाणसे मुख्य यथा सोलह हजार गोपी तहां सम्यक् प्रकार प्राप्त होती भयीं तामें परमात्मा जनार्दन श्रीकृष्ण हंस हैं तिनकी यह सोलह शक्ति वर्णन करी हैं। श्री कृष्ण चन्द्रमारूप हैं सोलह गोपी कलारूप हैं । एक एक के साथ हजार हजार न्यारी न्यारी सोलह हजार मुख्य हैं । तिन में भी हजार मुख्यतर हैं तिनमें आठ मुख्यतम इन सबकी स्वामिनी श्रीराधा हैं । यद्यपि श्रीचन्द्रावली भी श्रीराधाकी अंश है बराबरी अनुचित है, तथापि गौड़सम्प्रदायी सिद्धान्तमें व्रजलीलाके सुखके लियेऔर सौतशालकेसुखके लिये श्रीचन्द्रभान की बेटी बड़ी बहिन न्यारी यूथेश्वरी मानी हैं जैसे श्रीकृष्णके सखा सब सर्वदा दास होके भी व्रजलीला में कबहू कबहूं बराबरी करैं और लड़पड़ैं तैसें चन्द्रावलीकों जानों । और दो चार जो खण्डमण्डल राजा न होयं तो चक्रवर्तीकी शोभा कैसे होय श्रीराधा चन्द्रावली में श्रीकृष्णके प्रेमकी न्यून अधिकता दिखावैं हैं एक दिन श्रीचन्द्रावली के कपो-

१-प्रमदाशतकोटिभिराकुलिते इत्यागमोक्तेः ।

२-'स्कान्दे प्रभासखण्डे-'षोड़शैव सहस्राणि गोप्यस्तत्र समागताः । हंस एव मतः कृष्णः परमात्मा जनार्दनः ॥ तस्यैताः शक्तयो देवि ! षोडशैव प्रकीर्तिताः । चन्द्ररूपी मतः कृष्णः कलारूपास्तु ताः स्मृताः ॥ सम्पूर्णमण्डला तासां मालिनी षोडशी कला । षोडशैव कलायास्तु गोपीरूपा वरानना ॥ एकैकशस्ताः संभिन्नाः सहस्रेण पृथक् पृथक्' इति ।

लन पर चन्दन से मञ्जरी अपने हाथ तैं श्रीकृष्णने लिख दीनी । व गर्वकी भरी व्रजमें सखीन कों अपनो सौभाग्य दिखायबेकों फिरवेलगी । तब कोई श्रीराधाकी सखी बोली कि गर्व मत करो कपोलतलपर श्रीकृष्णके हाथकी लिखी मंजरी प्रकाश होरही है सो हम जानै हैं हमारी प्यारी श्रीराधा का ऐसे सौभाग्यकी भाजन नहीं हैं अर्थात् उन के मुखपर नहीं पत्ररचना करैं पर उनके मुखके पास हाथ लेजायबेसे प्रेमविवश होजायं हाथ कँपकँपाय जाय है, सोई हमारो वैरी है जो अन्तराय करै है। सोई श्रीहरिवंश गोस्वामीने कह्यो—

सवैया (अर्द्ध)

'हठके मनमोहन हार रहे, भटु हाथ जिवावन कों तरसै ।
कर कंपत बीचहीं छूटपड़े, कबहूंक प्रसा मुखलों परसै ॥

अब श्रीराधा व चन्द्रावलीको जो कृष्णमें प्रेम ताकी न्यून अधिकता दिखावैं हैं । चन्द्रावली प्रति श्रीललिता के वाक्य हैं हे चन्द्रावली ! तुह्मारी बड़ी धीर बुद्धि है कि काली की दहमें हरिके गिरवे की कथा सावधान होके कहवेलगी । हमारी सखी श्रीराधा के आगे जो कोई अन्य प्रसङ्ग में भी जा कदम पर चढके हरि जलमें कूदे वाको नाम भी ले देय तो महा क्षुद्रहृदय की छाती कूटती रोयवे लगै है । सौतसाल जैसे—

१—'पद्यावल्याम्' अन्यापि किं सखि न भाजनमीदृशीनां वैरी न चेद्भवति वेपथुरन्तरायः । मा गर्वमुद्वह कपोलतले चकास्ति श्रीकृष्णहस्तलिखिता किलमञ्जरीति ।

२—चन्द्रावलीं प्रति श्रीललितावाक्यम्—'त्वं धीरधीः फणिह्रदे हरिझम्पगाथां निष्कम्पमेव यदियं गदितुं प्रवृत्ता । तत्रानुषङ्गिकतयाप्युदिते कदम्बे वक्षः पिनष्टि रुदिता तरला सखी मे ॥

एक दिन श्रीकृष्ण चन्द्रावलीके साथ सोयरहे। स्वप्न में बरायबेलगे 'हे राधे मैं तुह्मारे अर्थ सोगंद खाऊं कि तुम मेरे हृदयमें हो। तुम मेरे बाहिर, तुमही आगे तुमही पीछे, तुम गिरिमें, वनमें, तुमही भवनमें, रात्रिमें, यह जल्प सुनके सेजपर चन्द्रावली मुखफेरलेती भयी याते सब से उत्तमता श्रीराधिका को आई, सोई श्रीकृष्ण ने कह्यो हे राधिके चाहे तुम कठोर होउ, चाहे कोमल होउ तुमही मेरी प्राण हो जैसे चकोरको चन्द्रलेखा विना गति नहीं है।

अब श्रीकृष्ण व राधा युगलकिशोर एक बरावरके भये। इन दोनों में कल्याण गुण सौन्दर्य माधुर्य चतुराई सौशील्य वात्सल्य में कौन अधिक है सोई 'गोविन्दलीलामृत' में शुकसारिका अर्थात् तोता मैना को संवाद है। यह मत समुझियो कि साधारण पक्षी प्रामाणिक नहीं हैं इन वृन्दावनके पक्षिन को स्वरूप 'श्रीमद्भागवत' के वेणुगीत में लिख्यो है गोपी परस्पर बोली हे मा! प्रायः करके या वन के पक्षी मुनि हैं श्रीकृष्ण को देख के उनको बजायो वेणुशब्द वृक्ष की कोमल कोमल डारीपर बैठके और बोली अर्थात्

१–सौतसाल 'ललितमाधवे'–'शपे तुभ्यं राधे त्वमसि हृदये त्वं मम बहिस्त्वमग्रे-पृष्ठत्वं त्वमिह भवने त्वं गिरिवने। इति स्वप्ने जल्पं निशि निशमयन्ती मधुरिपोरभूतल्पे चन्द्रावलिरथ परावर्तितमुखी'।

२–'विदग्धमाधवे' कृष्णवाक्यम्–'कठोरा वाथ मृद्वी वा प्राणास्त्वमसि राधिके। अस्ति नान्या चकोरस्य चन्द्रलेखां विना गतिः'।

३–'श्रीमद्भागवते'–प्रायो बताम्ब विहगा मुनयो वनेऽस्मिन् कृष्णं निरीक्ष्य तदुदितं कलवेणुगीतम्। आरुह्य ये द्रुमभुजान् रुचिरप्रवालान् शृण्वन्ति मीलितदृशो विगतान्यवाचः॥ तत्रैव पञ्चदशाध्याये 'नृत्यन्त्यमी शिखिन ईड्य मुदा हरिण्यः कुर्वन्ति गोप्य इव तव निरीक्षणेन। सूक्तैश्च कोकिलगणा गृहमागताय धन्या वनौकस इयान् हि सतां निसर्गः'॥

ब्रह्मवाद छोडके नेत्र मूंदके सुनै हैं। और भी तहां ही श्रीकृष्णने श्रीबलदेवजी से कही—या वृन्दावनमें जो आप आये तो ये मोर प्रसन्न होके नाच रहे हैं। हरिणी बडे हर्षसे गोपीन की तरह आपको देखैं हैं। और कोकिलान के समूह सूक्त अर्थात् स्तुति करैं हैं। धन्य है वृन्दावन के पक्षी पशुन का संतन को स्वभाव है तासे इनके वचन महाप्रमाणीक हैं। तामें पहिले मैना से तोता बोल्यो-जगत् के मोहन करवे वाले। कृष्णकी विश्व उत्पन्न करवेकी कीर्ति विश्वकी रक्षा करो। हमारे कृष्णको सौन्दर्य कैसो है कि स्त्रीसमूह के धीरज को नाश करदेय है। लीला लक्ष्मी को स्तम्भन (जडिमा) कर देय है। पराक्रम ऐसो कि गिरिराज श्रेष्ठ गेंद करिलियो। और भी निर्मल अमोल बहु गुण हैं। स्वभाव हमारे प्रभुको सबको रंजन करबेवारो है। तब मैना बोली कि—हमारी श्रीराधिका की प्रेम प्रीति सुन्दर रूप और सुशील पनो नाच गान चतुराई और गुणनकी पङ्क्ति की सम्पत् व कविता ऐसी शोभा पावैं हैं कि जगत् के मनके मोहन करवे वारे श्रीकृष्णको भी चित्त चोरै है अर्थात् सब गुण में उनसे श्रेष्ठ है। तामें पहिले प्रेम श्रीमद्भागवत में सब गोपीन के आगे श्रीकृष्ण हाथ

१—'गोविन्दलीलामृते'—शुकवाक्यम्—सौन्दर्यं ललनालिधैर्यदलनं लीला रमास्तम्भिनी वीर्यं कन्दुकिताद्रिवर्यममलाः पारे परार्द्धं गुणाः। शीलं सर्वजनानुरञ्जनमहो यस्यायमस्मत्प्रभोर्विश्वं विश्वजनीनकीर्तिरवतात्कृष्णो जगन्मोहनः॥

२—श्रीराधिकायाः प्रियतास्वरूपता सुशीलता नर्तनगानचातुरी। गुणालिसम्पत्कविता च राजते जगन्मनोमोहनचित्तमोहिनी॥

३—'श्रीमद्भागवते—न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः। या माभजन् दुर्जरगेहशृङ्खलाः संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना॥

जोड़के बोले कि मेरो तुमारो संयोग निर्दोष मैं अपनी सुन्दर कृत्य से देवतान की आयु भर जो तुह्मारे किये भये उपकार को प्रतिउपकार करनो चाहौं तो भी तुमसे उरिण नहीं होऊं। जो तुम दुर्जर घरकी शृङ्खला छोड़के मोकों भजती भयीं तासे मैं सदा तुह्मारो ऋणिया हौं। तुम अपनी ओरीसों मोकों निर्ऋणी करो तो भले होऊं। जब गोपीनके आगे हार गये तो फिर उन सबकी स्वामिनी महाभावस्वरूपा को काह कहनो और सुन्दरताई के तो डंका बज रहे हैं और सुशील पनो ताको नाम है कि नीच से भी छिद्ररहित हो के मिलै। अजामिल ने नारायण नाम मरती समय बेटाके मिससें लयो चार पार्षद ताकी रक्षाकों आये आप नारायण नहीं आये। और एक भक्त पूर्वके रहिबेवारो पश्चिम में नोकरी करै हो सो अतिसुन्दर अपनी किशोरी स्त्रीको मरनो सुनके घरकों चलो बीच में बरसाने की सांकरी खोरमें विरहव्याकुल होके हाय किशोरी! हाय किशोरी! चिल्लायवेलग्यो ताके पास आप श्रीराधिका किशोरी जाय ठाढी भयीं। तिनके दर्शन कर स्त्रीकों भूल के अलि किशोरी होगये सो प्रसिद्ध है। नाच गानमें श्रीललिताजी से ही आप हारगये तो श्रीराधिका को कहा कहनो। श्रीमद्भागवत में कोई एक अर्थात् श्रीललिता मुकुन्द करके सहित अर्थात् मुकुन्द गोड में आप मुख्य स्वर जाति कृष्ण की गाई भई से न्यारी उठावती भयी। तब श्रीकृष्ण भले भले कहि प्रसन्न होके पूजा करते भये। और जब ध्रुताल विशेष में वाकों गायो तब तो बहुत ही मान देते भये।

१–'श्रीमद्भागवते'–काचित्समं मुकुन्देन स्वरजातीरमिश्रिताः। उन्निन्ये पूजितास्तेन प्रीयता साधु साध्विति॥ तदेव ध्रुवमुन्निन्ये तस्यै मानं च बह्वदात्।

चातुरी एक दिन श्रीराधिका के महलमें आप श्रीकृष्ण आये और अङ्गुली से कपाट खोलबे लगे। श्रीराधिका बोली कौन अङ्गुली से कपाट खुड़कावै है। कृष्ण बोले माधो हूं। श्रीराधा बोली बसन्त हो तो कोकिला कों सुख देव। तब श्रीकृष्ण बोले चक्री हूं। श्रीराधा बोलीं का कुँभार हो फिर कृष्ण बोले नहीं धरणीधर हूं। श्रीराधा बोली का सर्पन के राजा शेष हो, कोई कों काटोगे। कृष्ण बोले नहीं मैं सांपको मर्दन करबेवारो हूं। श्रीराधा बोली तो गरुड़ हो। कृष्ण बोले मैं हरि हूं। श्रीराधा बोली बन्दर को यहां का काम है। ऐसे प्यारी के वचन से हारे हंसते भये कृष्ण तुह्मारी रक्षा करें। 'कविता पद्यावली' में एक दिन श्रीराधा के मान भयो। कृष्ण बोले हे राधे! तुम कुपिता (रिस भरी) हो। श्रीराधा बोलीं तुमही कुपिता अर्थात् पृथ्वी के पिता स्रष्टा हो। कृष्ण बोले तुम सब जगत् की माता। श्रीराधा बोलीं तुमही सब जगत्के माता (नापबेवाले)। कृष्ण बोले हे देवि! तुम परिहास केलिकलह में अनन्त हो अर्थात् अन्त शून्य हो। श्रीराधा बोलीं तुमही अनन्त हो। यह मन्द मुसक्याते वल्लवसुन्दरी के वाक्ययुद्ध से पराजय से करते शौरि श्रीकृष्ण! तुह्मारी शोभा करो। फिर तोता

१—'पद्यावल्याम्'—अङ्गुल्या कः कपाटं प्रहरति कुटिलो माधवः किं वसन्तो नो चक्री किं कुलालो नहि धरणिधरः किं द्विजिह्वः फणीन्द्रः। नाहं घोराहिमर्दी किमसि खगपतिर्नो हरिः किं कपीशो राधावाणीभिरित्थं प्रहसितवदनः पातु वश्चक्रपाणिः॥

२—हरिहरस्य—राधे त्वं कुपिता त्वमेव कुपिता स्रष्टासि भूमेर्यतो माता त्वं जगतां त्वमेव जगतां माता न विज्ञोऽपरः। देवि त्वं परिहासकेलिकलहेऽनन्ता त्वमेवेत्यसौ स्मेरो वल्लवसुन्दरीमितनमन् शौरिः श्रियं वः क्रियात्॥

बोल्यो हे शारिके (मैना) बंसीधारी जगत् की नारीको चित्तहारी गोपनारीनके संग बिहारी मदन मोहन उत्कर्ष करके बरतो। मैना बोली हां जब श्रीराधा संग बिराजमान रहैं तब मदनमोहन हैं और जब श्रीराधा न होयं तो विश्वमोहन भी होके स्वयं मदनसे मोहित होजांय। या प्रकार सबसे गुणन में श्रेष्ठ श्रीराधा हैं।

अब छठवों विशेषण सकल इष्ट काम अर्थात् सब वाञ्छित कामकी दाता श्रीराधा अथवा सकल के मध्यमें प्यारो काम नाम मनोरथ सो कौन है कि श्रीकृष्ण तिनकी दाता श्रीराधिका के उपासकन को श्रीकृष्णकी प्राप्ति सहजही होजाय है अथवा जितने इष्ट वस्तु हैं और जितने इष्ट हैं उनकोभी काम नाम वाञ्छित ऐसो प्रेम ताकी दात्री प्रसिद्ध श्रीराधा हैं। बिना प्रेम हरिको मिलबो भी अच्छो नहीं। असुरनको भी मिलतेरहे तासे कृष्ण नहीं चाहिये, प्रेम चाहिये। महाभावस्वरूप श्रीराधा और रूढ महाभाववारी सब गोपी हैं। ये सब प्रेमके विलास हैं आचार्यने 'दशश्लोकी' के ग्रन्थ में प्रेमाविशेष लक्षण पर्यन्त समाप्त कियो। काहेसे कि प्रेमको ही कोई अधिकारी नहीं है। आगे राग स्नेह आदिककी का चरचा है। सो केवल साधकन के उद्देशसें कह्यो और जब श्रीवृषभानुजा और उनकी सहस्र अपरिमित सखीनको नाम वामें आयो तो महाभा-

१–वंशीधरी जगन्नारीचित्तहारी स शारिके विहारी गोपनारीभिर्जीयान्मदनमोहनः ॥

२–शारिकावाक्यम्–राधा सङ्गे यदा भाति तदा मदनमोहनः। अन्यथा विश्वमोहोऽपि स्वयं मदनेन मोहितः॥

वपर्यन्त प्रेमके विलास विराजैही हैं। परोक्ष भगवान् को प्यारो तासे परोक्ष रक्खयो। कार्यसे कारण को अनुमान होय है। कारण में कार्य भरोही है। गोपीनको श्रीकृष्ण में रूढभाव श्रीउद्धवजी ने वर्णन कियो है कि ये गोपवधू पृथ्वीके ऊपर परम सफलजन्मा हैं जिनको अखिल आत्म गोविन्द में रूढ भाव है, जा रूढ भाव को बड़ेबड़े मुनि और हम व मुमुक्षु चाहना करैं हैं। अनन्त की कथामें जाको रस आगयो ताको ब्राह्मण व ब्रह्मा के जन्म से का प्रयोजन। नीच भी होय तब भी कृतार्थ है। गोपी तत्सुखी अर्थात् कृष्ण के सुखमें जिन को सुख जैसे द्वारिका की पटरानी तत्सुखी व स्वसुखी दोनों हैं और कुब्जा केवल स्वसुखी है। गोपिनको काम भी प्रेम-पार्यायी हैं सोही लिख्यो है तन्त्र में प्रेमही गोपीन को काम है यह प्रथा प्राप्त होती भयी यातें उद्धवादिक भी या काम की चाहना करैं हैं जो भगवान्के अति प्यारे हैं जो गोपी कामिनी होती तो श्रीकृष्ण उनको अपनो निर्दोष संयोग न बताते और उन में रूढ भाव कैसे होतो। तत्सुखीको लक्षण 'गोपीगीत' में वर्णन कियो है गोपी बोलीं हे कृष्ण जो तुह्मारे चरण कमल सुन्दर कोमल तिनकों अपने कठोर स्तनपर धरबेकों बहुत चाहैं हैं पर कोमल चरण

१–'श्रीमद्भागवते'–एताः परं तनुभृतो भुवि गोपवध्वो गोविन्द एवमखिलात्मनि रूढभावाः। वाञ्छन्ति यद्भवभियो मुनयो वयञ्च किं ब्रह्मजन्मभिरनन्तकथारसस्य।

२–'तन्त्रे' प्रेमैव गोपरामाणां काम इत्यगमत्प्रथाम्। इत्युद्धवादयोऽपि तद् वाञ्छन्ति भगवत्प्रियाः।

३–'श्रीमद्भागवते'–यत्ते सुजातचरणाम्बुरुहं स्तनेषु भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु। तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किंस्वित्कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः॥

में चोट न लगजाय तासे डरपैं हैं। धीरें २ धरैं हैं तिन च-रणन से तुम बनमें फिरो हो तो का कुशकंकणादिक से व्यथा न पावते होयँगे। हमारी जीवनरूप आयु तुमही हो तासे हम दुखपावें हैं। रति[1] प्रेम[2], स्नेह[3] प्रणय[4], रागनुराग[5], भाव[6] ये ६ प्रेमके ही विलास साहित्यदर्पणादि प्राचीन ग्रन्थन में लिखे हैं, उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं। इनको विस्तारपूर्वक विवरण श्रीरूप गोस्वामी ने 'उज्ज्वलनीलमणि' ग्रन्थ में कियो है। संक्षेप आशय लेके या ग्रन्थ में दिखाये हैं। और उदाहरण भी अपनी बुद्धिपूर्वक लिखे जायँ हैं। जैसेः—

रति[1]=बीज प्रणय[4] = खांड़
प्रेम[2] ईख = राग[5] = शर्करा
स्नेह[3] रस = अनुराग[6] = सिता(मिश्री)
मान[4] गुड़ = महाभाव[8] = सितोपला(ओला)

इन गोपिन में रति आदिक और साधकन कीसी नहीं हैं किन्तु महा भाव सहित हैं। अनेक जन्म को रूढ भाव कृष्णमें भरो है अवतार समय प्रथम दर्शन में लोक शि-क्षा को रति सदृश प्रतीति होय है। जाको जितनों प्रेम जा जातिको श्रीकृष्ण में उदय होय है तामें श्रीकृष्णको भी उतनों ही वाही जाति को (प्रेम) उदय होय है। रूढ भावको लक्षण रासपञ्चाध्यायी में जब अन्तर्धान भये तब [1]प्यारी श्रीकृष्णकी चाल मन्द मुसक्यान भाषण आदिके विषय प्रतिरूढ मूर्ति होजाती भयीं। और सो कृष्ण हमही हैं ऐसे निवेदन करती भयीं। अभेद ब्रह्मज्ञान की शङ्का न होय ताके लिये दो विशेषण हैं। 'तदात्मिका' नाम तिनमें

१–तत्रैव–'गतिस्मितप्रेक्षणभाषणादिषु प्रियाः प्रियस्य प्रतिरूढमूर्तयः। असावहं त्वित्यबलास्तदात्मिका न्यवेदिषुः कृष्णविहारविभ्रमाः' ॥

मन तदाकार होगयो और तिनके विहारमें विभ्रम होगयो तहां हीं और भी कह्यो मैं कृष्ण हूं मेरी ललित गति देखो तहां भी 'तन्मनाः' विशेषण है। अभिप्राय यह है कि सामान्य भूतको जापर आवेश होजाय सोई अपने को छोड़के भूतरूप होके बोलै, इनने ध्यानकर मनलगाय नन्दपूतको पूर्ण आवेश अपने मन ऊपर करलियो तो कृष्णरूप होके बोलै तो का आश्चर्य है। तासे कृष्णरूप होके कृष्णलीला को अनुकरण करती भयीं। सो इनके भावकी रूढता तीन प्रकार मन वाणी कायाकी है तामें मनकी तदाकारता जैसे 'गीतगोविन्द' में मधुरिपु मैंही हूं ऐसी भावनाको स्वभाव पड़गयो। वाणी की तदाकारता जैसे 'सूरदासजी' ने वर्णन करी "माई कोई लेवरी गोपालहि। दधिको नाम श्यामरस सुन्दर, बिसर गयो व्रजबालहि" इत्यादि। और भी "चोली चीर हार हीर मांगत, मुखनिकरत श्याम है। और कायाकी तदाकारता उन को अनुकरण करनो सो 'श्रीमद्भागवत' में सब लीला करनो प्रसिद्ध ही है। जब अत्यन्त रूढ दशा होय तब कृष्णरूप ही होजाय। जब कुछ शिथिलता होय तब विरह व्याकुल वृक्षादिकन से पूछती फिरै। तामें पूर्व संस्कार से अथवा सुनवेसे दर्शन करके बड़ी प्रीति से कृष्णमें मन लगजाय ताको नाम रति है। जैसे 'पद्यावली' में हे सखि मैं जमुना किनारे के एक रस्तापर जाती रही, तहां एक जलधर (बादर) कान्तिकी श्याम मूर्ति अकस्मात् देखी। दृगभंगी

१—'श्रीमद्भागवते'—कृष्णोऽहं पश्यत गतिं ललितामिति तन्मनाः।

२—'गीतगोविन्दे'—मुहुरवलोकितमण्डनलीला मधुरिपुरहमिति भावनशीला॥

३—'पद्यावल्याम्'—अकस्मादेकस्मिन् पथि सखि मया यामुनतटं व्रजन्त्या दृष्टोऽयं नवजलधरश्यामलतनुः। स दृग्भङ्ग्या किं वाऽकुरुतेन तु जाने तत इदं मनो मे व्यालोलं क्वचन गृहकृत्ये न चलते॥

से जानै काह कियो तो यह मैं नहीं जानौं तब से मेरो मन ऐसो चञ्चल भयो कि घरके काममें लगै नहीं ॥ विघ्न कैसे भी प्राप्त होय पर प्रीति घटै नहीं ताको नाम प्रेम है सो रासपञ्चाध्यायी में प्रसिद्ध है । जब गोपिन कों वेणु बजायके बुलाईं और वे सब धर्म छोड़ के श्रीकृष्णके पास चलीं तब उनके पति भैय्या बंधूनने रोकी पर गोविन्दने मन हर लियो नहीं लौटती भयीं । प्रेम बहुत बढ़ै तब चित्त द्रवीभूत होय अर्थात् पिघलै ताको नाम स्नेह है । सो स्नेह दो प्रकारको घृतस्नेह, मधुस्नेह । तामें घृतस्नेह चन्द्रावली आदिमें तदीयतामय नाम हम उनकी हैं भावान्तर से मिल कर सुरस होय जैसे घी मिश्री आदि से सुरस होय सोई 'उज्ज्वल नीलमणि' में जो श्रीकृष्णकों दूरसे देखके उठ आदरपूर्वक आलिङ्गन करैं, जो पवित्र पूर्ण बड़े स्नेह से उन कों वशी करै और श्रीकृष्ण की केलि की वर्षा से मिश्रीके ओला के तरह घुलजाय ऐसी हमारी सखी चन्द्रावली के साथ कौन उपमा देवेयोग्य है यह पद्माने कह्यो आदर गौरवता से होय है सो दोनों के आश्रय है । मधुस्नेह मदीयतामय नाम प्यारो हमारो है । आदरशून्य आपही माधुर्य को भरो नाना रस जामें भरे जैसें मधु और काहू सें मिल

१–'श्रीमद्भागवते–ता वार्यमाणाः पतिभिः पितृभिर्भ्रातृबन्धुभिः । गोविन्दापहृतात्मानो न न्यवर्तन्त मोहिताः ।

२'उज्ज्वलनीलमणौ'–अभ्युत्थाय विदूरतो मधुभिदा याश्लिष्यते सादरं या स्नेहेन वशीकरोति गुरुणा पावित्र्यपूर्णेन तम् । क्षिप्रं याति सितोपलेव विलयं त्वत्केलिवृष्ट्या च या युक्ता हन्त कथोपमातुमपि सा चन्द्रावली मे सखी ॥

वैकी अपेक्षा नहीं सो श्रीराधामें है। श्रीकृष्ण बोले हे सुबल! स्नेहरूप माधुर्यसार से श्रीराधा बनी है। सुधामयी जैसे प्रतिमा ताकी न्यायघन होके भी भावरूप गरमी से पिघलजाय है। सो राधानाम व धाम कोई प्रसंगमें भी मेरे कानके छेदमें प्राप्त होय तो जाकी उपमा नहीं ऐसी निविड आनन्दमयी होय तत्क्षण सब जगत् को भूलजाऊं।

अब मान वर्णन करे हैं जब स्नेह अधिक हो तब कोई कारण से अथवा विना कारण से जो कुटिलता ताको नाम मान है। नायक नायिका के आलिंगन चुम्बनादि को विरोधीमान है। चन्द्रावलि आदि में उदात्त अर्थात् सरलपने को मान है कबहूं सरलपनो वामता की गंध लिये रहे श्रीराधाको ललितकौटिल्य मानहै सो जैसे कारण से "पद्यावली" में—झूंठी बकवाद मत करो चुपहोजाव बहुत दिननसे कामी तुमको जानोहौं। जाके इन चरण नख के बिलास रागबाहुल्य से तुह्मारो हृदयपद प्राप्त भयो है ताही प्यारी के पास खुले मैदान जावो मो सदा की सूधीसाधी कुटिलता जानैं नहीं मेरेसे तुम्हारो का काम है॥ अकारण मान जैसे भगवत रसिकने कह्यो। अपराध नहीं पिय को कछु भूल तू गई। प्रतिबिंब देख आपनो सखि पीठ क्यों दई॥ "और भी" पिया उर मुकुर निहार

१–उज्ज्वले कृष्णवाक्यम्–राधास्नेहमयेन हन्त रचिता माधुर्यसारेण सा सौधीव प्रतिमा घनाप्युरुगुणैर्भावोष्मणा विद्रुता॥ यन्नामन्यपि धामनि श्रवणयोर्याति प्रसङ्गेन मे सान्द्रानन्दमयी भवत्यनुपमा सद्यो जगद्विस्मृतिः।

२–'पद्यावल्यां' कृतं मिथ्या जल्पैर्विरमे विदितं कामुक चिरात् प्रिया तामेवोच्चैरभिसर यदीयै र्नखपदैर्विलासैश्च प्राप्तं तव हृदि पदं रागबहुलैर्मया ते किं कृत्यं ध्रुवमकुटिला चार परया।

अपनपो निभ्रम विकल मानयुत भोरी । चिबुक चारु प्रलोय प्रबोधिन निज प्रतिबिम्ब जनाय निहोरी ॥ "अब प्रणय कहै हैं कान्त की देहादि के साथ अपने देहादि को ऐक्य भावनामय जामें संभ्रमनहीं ताको प्रणय कहैं । यही प्रणय जो विनय को भरो होय तो मैत्र प्रणय कह्यो जाय और जामें भय नहीं प्यारे को अपने वश कर राखे तो सख्य प्रणय होय तामें मैत्रप्रणय रासपंचाध्यायी में, कोई श्रीकृष्ण को करकमल हर्ष से अपनी अञ्जलि में लेती भई । कोई तिनकी भुजा चन्दन चर्चित कंधे पर धरती भई ॥ सख्य प्रणय यथा श्रीकृष्ण की जानुपर नितम्ब धरे, उनके वक्षस्थल पर अपने वक्षोज धरे, मुखपर मुख, उनकीभुजा अपनी तकिया करी, अपनी भुजा उनके कंठ लपेटी, ऐसे प्यारी सोई, जागी नहीं । अति विश्वास में भी कहूं मान होय है, यथा 'रासपंचाध्यायी' में—ताके अंतर वन के उद्देश जाय के गर्व से केशवसे बोलती भई मैं चल नहीं सकों जहां तुम्हारो मन होय ले चलो ॥ प्रणय के उत्कर्ष से जब दुःखभी चित्त में सुख रूप से अनुभव हो ताको राग कहैं । जैसे 'प्रेमपत्तन' में—भयंकरग्रीष्म की ऋतुमें संताप बहुत शून्य रासतापर दोनों प्रिया प्रीतम बात कररहे

१—'श्रीमद्भागवते'-काचित्कराम्बुजं शौरेर्जगृहेऽञ्जलिना मुदा ॥ काचित् दधार तद्बाहुमंसे चन्दन रूषितं ।

२ कृष्णस्य जानुपरतान्नितम्बाश्रितम्बा वक्षःस्थले धृतकुचा वदनेऽर्पितास्या: कण्ठे निवेशितभुजास्यभुजोपधाना कान्ता नहींङ्गिति मनागपि लब्धबोधा ।

३—श्रीमद्भगवते-ततो गत्वा वनोद्देशं दृप्ता केशवमब्रवीत् ॥ न पारयेऽहं चलितुं नयमां यत्रेते मनः ।

४—प्रेमपत्तने—ग्रीष्मग्रीष्मऋतु संतापशून्यरथ्यान्तरस्थयो: ॥ अन्योन्यालापसुखिनो: धूर्ताश्चन्द्रायते रवि: ॥

दोनों संलाप में सुखी ऐसे भये कि सूर्य्य की किरण चन्द्रसी शीतल ह्वै गई । राग दो प्रकार को एक नीलिमा, एक रक्तिमा या रागमें कबहूं घटबे की संभावना नहीं है जो बाहिर में अतिशय प्रकाशमान होके आत्मलग्न भावकोआ-वरण करे ताको नीलिमा कहैं यह राग कबहू नष्ट नहीं होय और काहू की अपेक्षा नहीं करे और जो अपनी कान्तिद्वारा सदाही वढतो जाय जाकी भावको आवरण न होय सो रक्तिमा राग बोल्योजाय है सो श्रीराधाकी सखी श्रीललि-ता रंगदेवी आदि में है ताही के अन्तर्गत मञ्जिष्ठा राग है सो श्रीराधाको है । नील राग बहुत काल को साध्य श्याम राग बोल्यो जाय है सो भद्रादि में है । मंजिष्ठा राग को विशेष धर्म यह है कि आवरणशून्य है श्यामलादि में भी रक्तिमा राग है पर कुसुम्भी है यह कुछ दूसरे की अपेक्षा करै है इन सब में मंजिष्ठा रागवारी श्रीराधा को उदाह-रण दिखावैं हैं सब सखीन ने श्रीराधाको बहुत सिखायो कि तुम मान करके अपनो गौरव बढाओ मनको उपराम करलेव कितनी ही श्रीकृष्ण विनय करें मत मानो सोही श्रीराधाने कियो पर जब अत्यन्त व्याकुल भईं, तब बोलीं, विरह की श्वासें सो मुख को जरावें हैं और हृदय को नि-र्मूल करके मथन करैं हैं, निद्रा आवे नहीं, प्यारे को मुख दीखे नहीं, रातदिन रोवैं हैं, अंग सब सूखैं हैं, चरण में पड़ै जो प्यारो ताकों त्याग दियो हे सखियो ! तामें कौन गुण

१–पद्यावल्यां–निःश्वासा वदनं दहन्ति हृदयं निर्मूलमुन्मथ्यते निद्रा नैति न दृश्यते प्रियमुखं रात्रिंदिवा रुद्यते । अङ्गं शोष मुपैति पादपतितः प्रेयांस्तथोपेक्षितः सख्यः कं गुणमाकलय्य दयिते मानं वयं कारिताः ॥

देखके तुमने मोसे मान करायो, सदा अनुभव करने में भी जो प्यारो नयो नयो लगै ताको नाम अनुराग है सो 'दानकेलिकौमदी' में जैसे गोवर्द्धन की दानघाटी में श्रीकृष्ण के दर्शन करके बोली हे सखि! हरि बारम्बार हमारे नेत्रपथ में आये हैं पर पहिले कबहू ऐसी माधुरी नहीं देखी एक अंग के एकदेश में जो माधुरी है ताके लवमात्र आस्वादन करवे को ये नेत्र समर्थ नहीं हैं परस्पर को वशीभाव ताको प्रेमवैचित्र्य कहैं। ताके होवे से बिना प्राण जातिमें भी जन्म होवेकी लालसा होय है और सदा वियोग की स्फूर्ति रहै तामें बिना प्राण जातिमें जन्म की लालसा, 'दानकेलिकौमदी' में ललिता से श्रीराधा बोलीं हे कृशोदरि! हम बांस जाति में जन्म लेवेकों तप करेंगी सब जातिसे बांस श्रेष्ठ है कारण यह कि यह मुरली बहुत तपस्या के फल से मुरारि के बिम्बाधरमाधुर्य्य को आस्वादन करै है। संयोग में भी वियोग की स्फूर्ति जैसे भगवत रसिक ने कह्यो अरबरात मिलवे कों निसदिन मिलेहु रहत मानों कबहुं मिलेना, 'राधासुधानिधि' में प्यारे के गोद में बैठी भी हा मोहन! अकस्मात् ऐसो मधुर प्रलाप विधान करैं श्यामसुन्दर के अनुराग में देख विह्वल अंग

१-'दानकेलिकौमुद्यां'-प्रपन्नः पन्थानं हरिरसकृदेतन्नयनयोरपूर्व्वोऽयं पूर्व्वं क्वचिदपि न दृष्टो मधुरिमा। प्रतीकेऽप्येकस्य स्फुरति मुहुरङ्गस्य सखि या प्रियस्तस्याः पातुं लवमपि समर्था न दृगियम्॥ २-'दानकेलिकौमुद्यां'-तपस्यामः क्षामोदरि वरयितुं वेणुषु जनुर्वरेण्यं मन्येथाः सखि तदखिलानां सुजनुषाम्। तपस्तोमेनोच्चैर्यदियमुररीकृत्य मुरली मुरारातेर्बिम्बाधरमधुरिमाणं रसयति॥ ३-राधासुधानिधौ,-अङ्कस्थितेऽपि दयिते किमपि प्रलापं हा मोहनेति मधुरं विदधत्यकस्मात्। श्यामानुरागमदविह्वलमोहनाङ्गी श्यामा मणिर्जयति कापि निकुञ्जसीम्नि॥

।जिनके ऐसी निकुंजसीसि श्यामा मणि कोई उत्कर्ष से विराजै हैं भाव की परा काष्ठा अर्थात् जहां ताईं बढ सके ताको नाम महाभाव है सो रूढ व अधिरूढ दो भेदको है। जा समय श्रीकृष्ण के सुखमें भी पीड़ाकी शंकासे महान दुख होय निमेषमात्र काल बिना दर्शन सह्यो न जाय सब विस्मरण होजाय ताकों रूढभाव कहैं तामें पलक बराबर काल बिना दर्शन सह्यो न जाय सो दशमस्कन्ध में गोपी बहुत कालसें बांछा करती जिनके दर्शन के विघ्न मे पलक बनायवे वारे कों गारी देती तिन श्रीकृष्ण को पाय के नेत्रद्वारा हृदय में ले जाय के सब आलिंगन करके तिनके भावकों प्राप्त होतीं भईं जो योगिन को दुर्लभ अथवा तिनके नित्य पास रहिबेवारी रुक्मिणी को दुर्लभ है। सुख में भी पीड़ा की शंका सो 'यत्ते सुजात चरणांबुरुह' में कहि आये। मोह के बिना सबको भूलनो जैसे एकादश में उन गोपीन ने मोमें ऐसी बुद्धि बांधी कि अपनी आत्मा तथा विश्वकों नहीं जानतीं भईं जैसे समाधिमें मुनि को अनुसंधान नहीं रहे और समुद्र के जल में जैसे नदी प्रवेश होय ता रीति से मोकों प्राप्त होती भईं यह श्रीकृष्ण ने उद्धवजीसे कह्यो यां रूढ महा भाव से क्षण कल्प बराबर कल्प क्षण बराबर होय एकादश में उद्धव से भगवान के वाक्य कि मो प्रेष्ठ के गोचर के स-

१—श्रीमद्भागवते—निमेषासह्यता यथा—गोप्यश्च कृष्णमुपलभ्यचिरादभीष्टं यत्प्रेक्षणे दृशि तु पक्ष्मकृतं शपन्ति ॥ दृग्भिर्हृदीकृतमलं परिरभ्य सर्वास्तद्भावमापुरपि नित्ययुजां दुरापम्। २—एकादशे—ता नाविदन्मय्यनुषङ्गबद्धधियः स्वमात्मानमदस्तथेदम् ॥ यथा समाधौ मुनयोऽब्धितोये नद्यः प्रविष्टा इव नामरूपे। ३—तत्रैव—तास्ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता मयैव वृन्दावनगोचरेण। क्षणार्द्धवत्ताः पुनरङ्ग तासां हीना मया कल्पसमा बभूवुः ॥

मयमें गोपिन को जोजो कल्प बराबर रात्रि क्षणमात्र भई रहीं सोही वृन्दावन में सामान्य रात्रि मेरे बिना कल्प समान होती भई । जा समय कोटि ब्रह्माण्ड के सुख हरि के दर्शनादि सुख लेशके बराबर न होय और विरह लेशके बराबर कोटि ब्रह्माण्ड की पीड़ा न होय ताकों अधिरूढ महाभाव कहैं, जैसे शिववाक्य एक दिन श्री पार्वती श्रीराधा को प्रेम पराक्रम पूछवेलगी शिवजी बोले लोक से न्यारो जो वैकुण्ठ व कोटि ब्रह्माण्ड के जो सुख और दुख तीनकाल भूत, भविष्यत्, वर्तमान के जो दोनों अलग अलग इकट्ठे होयं तो भी श्रीराधाकी प्रेम परिपाटी से उत्पन्न भये जो सुख दुख ताको समुद्र वाकी बून्द कों नहीं प्राप्त होय । यह अधिरूढ दो प्रकारको है मोदन और मादन मोदन जब उदय होय तब कृष्ण और उनकी प्रेयसीन को महाक्षोभ व चमत्कार होय सुदीप्त सात्त्विक के विकार दिखाई पड़ें सो श्री राधिका और उनके यूथमें है अन्यत्र नहीं यही मोदन बड़े वियोग की दशामें मोहन होय जाके उदय होवे में श्रीकृष्ण को पटरानी आलिंगन करें तबभी ताप मूर्च्छा होय श्री राधिका के विरह में ब्रह्माण्ड को क्षोभ करावें तरुलता को रोदन करावे सो केवल वृन्दावनेश्वरी के यूथ में अन्यत्र नहीं सो उमापतिधरने "पद्यावलि" में लिख्यो है मथुरा से कोई एक सन्यासिनी आशीर्वाद देके ललितादिक की सभा में बोली जाकी रत्ननकी छाया

१–अथ शिववाक्यं–लोकातीतमजाण्डकोटिगमपि त्रैकालिकं यत्सुखं दुःखं चेति पृथग् यदि स्फुटमुभे ते गच्छतः कूटताम् । नैवाश्यासतुलां शिवे ! तदपि तत्कूटद्वयं राधिकाप्रेमोद्यत्सुखदुःखसिन्धुभवयोर्बिन्देत बिन्दोरपि ॥ २–पद्यावल्यां–रत्नछायाच्छुरितजलधौ मन्दिरे द्वारिकाया रुक्मिण्यापि प्रबलपुलकोद्भेदमालिङ्गितस्य । विश्वं पायान्मसृणयमुनातीरवानीरकुञ्जे राधाकेलीभरपरिमलध्यानमूर्च्छा मुरारेः ॥

से जलनिधि जो समुद्र कर्बुरित नाम ऊजरो कारो भयो ऐसे द्वारिका के मन्दिर में रुक्मिणीजी जिन श्रीकृष्ण को आलिंगन करें और पुलक अंगमें होय ताही समय यमुना के किनारे कुंजसंबन्धी श्रीराधाकी केलि परिमल ध्यान करते २ श्रीकृष्ण को मूर्च्छा उपस्थित भई सो विश्व की रक्षा करे। श्रीराधाको भी विरह दुख अद्भुत है सो सूरदास ने वर्णन कियो दुहू दिश को दुख दुःसह विरहनी कैसे करजोसहैं जब राधा तब माधव माधव राधामाधो रटत रहे। गोपिन को मरे परभी अपने शरीर के पांचभूत की श्रीकृष्ण संगकी तृष्णा रहे सो 'पद्यावली' में—जो हमारो शरीर मृत्युको प्राप्त होय और पांचभूत अपने २ अंश में प्रवेश होयं तो शिरसे दण्डवत् करके विधाता को हम यह बर मांगें कि हमारे शरीर को जल तिनकी बावरी में मिले और ज्योति तिनके मुख देखबेके दर्पण में और उनके आंगन के आकाशमें आकाश और उनके चरण चलबे के मार्ग में माटी और उनके पंखा के पवन में पवन मिलै सो कृष्णमय तन मन सूरदासजी ने वर्णन कियो गोपिन ने कही—

ऊधो जो कोई या तन हि फेर बनावे।
तऊ न नन्द नँदन तज मधुकर और कछू मन आवे॥
या तनकी कोई त्वचा काढके सुन्दर दुन्दुभि साजै।
विविध उतंग तान रंग से श्याम श्याम कहि बाजै॥
या तनकी कोई करै किंगरी और नसन के तार।

१-तत्रैव-पञ्चत्वं तनुरेतु भूतनिवहाः स्वांशे विशन्तु स्फुटं धातारं प्रणिपत्य हन्त शिरसा तत्रापि याचे वरं तद्वापीषु पयस्तदीयमुकुरे ज्योतिस्तदीया ङ्गणे। व्योम्नि व्योम तदीयवर्त्मनि धरातत्ताल वृन्तेऽनिल॥

आठौं जाम मधुर ध्वनि निकसै सुन्दर श्याम मुरार ॥
निकसैं प्राण होय तन मिट्टी द्रुम लागे तिहँ ठाम ।
सूरदास शाखा फल पत्री लेत उठै हरि नाम ॥

मादन केवल वृषभान नन्दिनी में है सोही वृत्ति भेदसे दिव्युन्माद होय ताके उदय होवे से उद्घूर्णा भ्रममयी प्रलाप देखी जाय और अनन्त भाव उठैं ता समय वनमाला से ईर्षा पुलिन्दी की बडाई तमाल स्पर्श करे जो मालती ताको सौभाग्य वर्णन यह सब होय सो अनिर्वचनीय अवस्था है। तामें प्रलाप के दस जल्प भ्रमरगीत में लिखे हैं सो भ्रममयी अवस्था है। तीव्र जो अन्तिम उत्कंठा तासे जा समय जो उन्मत्तता प्यारे की संगम की होय सोई बकै जैसे सब गोपी उद्धवसे कृष्ण की बात पूछबेलगीं कोई एक प्यारे को संगम ध्यान करत भौंरा को देखके मानों कृष्ण ने हमको मनायवे कों दूत भेजो तासों बोली अथवा प्यारी के प्रलाप सुनवे कों कृष्ण ही भौंरारूप धरके आये इन जल्पों का क्रम नहीं है जैसे हे कपटी के बन्धु! हमारे चरण मत छूवे। एक बार अधरामृत मोहनी प्याय के हमें दोनों लोकसे भ्रष्ट करी। हे छै पांवके वा देखभारे को हमारे आगे क्यों गावै। स्वर्ग पातल पृथ्वी में वा कपट मुस्क्यान वारे कों कौन स्त्री दुर्लभ है मेरे चरण पर माथो मत धरै तेरी मान मनावेकी चाटुकारी जानों हों॥ वा कारे ने बधिक की तरह बाल वानर मारो, बलि बांध्यो, शूर्पणखा विरूप करी तासे हम कारे के संग से धाई।

१-श्रीभागवते-काचिन्मधुकरं दृष्ट्वा ध्यायती तत्सङ्गम् ॥ प्रियप्रस्थापितं दूतं कल्पयत्येदमब्रवीत् ॥

वाकी कथा एक बार सुनवेवारो नष्ट होजाय हमने तो वाको संग कियो कैसे न नष्ट होयं । कपटी के बचन हमने श्रद्धा करके सच्चे जाने । हे प्यारे के सखा फेर आयो प्यारे ने भेज्यो मांग का मांगे है ॥ मधुपुरी में आर्यपुत्र अब हैं पिताको घरको बन्धु गोपन को स्मरण करे है अगर सुगंधी की भुजा कबहूं माथेपर धरैंगे यह दिङमात्र दिखायो ।

अब इतनो और विचार है कि प्रेमी तीन प्रकारके एक कृष्ण में प्रेम विशेष करें श्रीराधा में उनसे कम, दूसरे युगलकिशोर में समान, तीसरे श्रीराधा चरण प्रधान वारे । तामें श्रीराधा चरण प्रधानवारे रसिकन ने श्रेष्ठ बताये हैं, राधासुधानिधि में लिख्यो है कि वृषभानुजी जो व्रज में श्रेष्ठ तिनकी पुत्री श्रीराधा प्रणय रसकी मूर्ति उनकी दास्यता जो हमको मिल जाय तो हमकों धर्म करवेसे का और देवता समूहसे का प्रयोजन और ब्रह्मासे का और महादेवजीसे का और श्याम सुन्दर के मिलबेको यत्न का करनो सो आपही आ जांयगे । श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु में श्रीरूप गोस्वामी ने लिख्यो है कि सुहृद जो श्रीराधिका तिनमें ललितादिक मुख्य सखीन की जैसी रती ताको आश्रय लेके अर्थात् जैसे श्रीललितादिकन कीरति श्रीकृष्ण से श्रीराधा में विशेष है ऐसे कोई भक्त विशेष की रति श्रीराधा में कृष्ण रति के समान होय अथवा ऊना नाम कम होय तो ताको संचारी कहैं । और जो श्रीकृष्ण से

१—'राधासुधानिधौ'—रहोदास्यं तस्याः किमपि वृषभानोर्व्रजवरीयसः पुत्र्याः पूर्णप्रणयरसमूर्तेर्यदि लभे । तदा नः किं धर्मैः किमु सुरगणैः किञ्चविधिना किमीशेन श्यामाप्रियामिलनयत्नैरपि च किम् ॥

श्रीराधा में अधिक होय और निरन्तर अभिनिवेश अर्थात् राधानाम रूप कीर्तन ध्यान द्वारा बढती चली जाय तो मधुर नाम के रस में संचारी होके भी पहिले से श्रेष्ठ है या रति को भावोल्लास नाम है संस्कृत के श्लोकन से या प्रकरण में बहुत प्रमाण दिखाये भाषामें भी जैसे श्रीहरिवंश गोस्वामी राधा चरण प्रधान हृदय अति सुदृढ उपासी व्यासजी मोहि श्याम को डेर नहीं श्यामा छूट तन आशा तेरी विहारन देवजी हम बे परवाह विहारन के रसिका वतंस ने स्वप्न में युगुल किशोरके दर्शन किये श्रीराधा कृष्ण से बोली ये तुम्हारे रसिक आये यह बात सुनके वे महान दुखित भये और अन्नजल नहीं कियो श्रीजी ने हमको अपने रसिक क्यों न बताये—जब सखी सहस्रन से सेवित यह विशेषण श्रीराधाको है श्रीकृष्ण को नहीं तब अवश्य सखी राधा चरण प्रधान चाहिये। सो वे राधा चरण प्रधान वारे दो प्रकार के एक तो श्रीकृष्ण को श्रवण कीर्तन अर्चनादिक से प्रसन्न करके राधा चरण में प्रीति मांगवेवारे, दूसरे श्रीवृषभानु पुरादि ग्राम में जन्म पायके श्रीराधिका के साथ भैय्या बहिनादि सम्बन्ध पायके उनकी सेवा करें और हमारी प्राणेश्वरी के कान्त हैं उनके नाते से श्रीकृष्णकी भी सेवा करें स्वतन्त्र कुछ सम्बन्ध नहीं। तामें पहिले को प्रमाण श्रीराधासुधानिधि में जो गोविन्द की कथामृत रस के हृदमें चित्त मेरो डूबो होय तिनके गुण कीर्तनार्चन विभू-

१—'भक्तिरसामृतसिन्धौ'—संचारी स्यात्स मोनाग्राक्कृष्णरत्या सुहृद्रतिः। अधिका पुष्यमाणा चेद्भावोल्लास इतीर्यते ॥ २—राधासुधानिधौ—यद्गोविन्दकथासुधारसहृदे चेतो मेमा जृम्भृत यद्वा तद्गुण कीर्तनार्चनविभूषाद्यैर्दिनं प्रापितम्: यद्यत्प्रीतिरकारि तत्प्रियजनेष्वात्यन्तिकी तेन मे गोपन्द्रात्मजजीवनप्रणयिनी श्रीराधिका तुष्यतु॥

षादि करके दिन प्राप्त कियो होय और जो जो उनके प्रिय जननमें मैंने अत्यन्त की प्रीति करी होय तो श्रीनन्दके बेटा की जीवन प्रणय वारी श्रीराधिका मोपर प्रसन्न होय, दूसरी विवाहादि समय में वृषभानु घरकी नित्य परिचारिका दायजे में गई वे नित्य दासी । अब श्रीराधाचरणप्रधान वारेन को विभावादि वर्णन करें हैं। प्रीति जामें आस्वादन करी जाय ताको नाम विभाव है सो विभाव दो प्रकार को आलम्बन, उद्दीपन, तामें आलम्बन दो प्रकार को विषयरूप, आधाररूप. तामें विषयरूप कृष्णसहित श्रीराधा आधाररूप श्रीललितादिक सखी तामें श्रीराधाको स्वरूप जैसे 'राधा-सुधानिधि' में गोरे अंगमें कोमलता, मन्दमुसक्यान में-मधुरता, नेत्रनके अंचल में दीर्घता, वक्षोजमें गरिमा, मध्यांग में सूक्ष्मता, चालमें मन्दता, नितंबमें पुष्टता, भ्रुकुटि में कुटिलता, विम्बाधर में लालिमा, हे राधे तुम्हारे हृदय में कृष्ण रसकी जडिमा सो मेरे ध्यान के गोचर हैं। यद्यपिश्री-राधाके अंग आपहीभूषण रूप हैं उनको भूषण की अपेक्षा नहीं सोही 'विदग्धमाधव' में कह्यो है मंद मुसक्यान की कांति की भंगी ही हार है फिर और हार पहिराय के पिसे को पीसनो है । हे राधे! तुमको मंडन से का प्रयोजन अंग सोंही प्रकाशमान हों तथापि भूषणन की साफल्य और रसिकन के हृदय

१—'राधासुधानिधौ'—गौराङ्गे म्रदिमा स्मिते मधुरिमा नेत्राञ्चले द्राघिमा वक्षोजे गरिमा तथैव तनिमा मध्ये गतौ मन्दिमा । श्रोण्यां च प्रथिमा भ्रुवोः कुटिलिमा बिम्बाधरे शोणिमा श्रीराधे हृदि ते रसेन जडिमा ध्यानेऽस्तु मे गोचरः ॥

२—'विदग्धमाधवे'—हारश्च स्मितकान्तिभङ्गिभिरलं पिष्टान्नपेषीकृतः किं राधे तव मण्डनेन नितरामङ्गैरपि द्योतिता ॥

सुखके अर्थ भूषण भी धारण करे तामें पहिले सोलह[१] श्रृंगार, स्नान किये भई, नासा के आगे जाम्रन्माणि, नीलपट, सूत्रिणी (नीवी), वेणीवँधी, चन्द्रिकासहित अगं चर्चित, चिकुर में फूल गुहे, माला पहिरे, कमल हाथमें, मुख में पान, चिबुक में कस्तूरी की विन्दु, चिकुर में गुच्छा, नेत्रमें कज्जल, सुचित्र मकरीपत्र, चरणमें महावर, तिलक लगे, इन सोलह आकल्प से श्रीराधा प्रकाश पावे। वारह[२] भूषण वर्णन करैं हैं, दिव्या चूडाकी मणीन्द्र, सोनेके रचे दो कुण्डल, नितम्ब में कांची, गरे में धुकधुकी, सूक्ष्म चक्राकार कानके छेद में शलाका, दो हाथ में चूणीघटा, कंठ में भूषा, ऊर्मिका (अंगूठी), तारा-नकोहार, कोटि रत्न लगे ऐसे कटक भुजा में, चरण में नूपुर, पदकी अंगुरी में विछियां से बड़ी छवि, बारह तंत्र करके जैसे सूर्य्य तैसे बारह भूषण से श्रीराधा प्रकाश पावैं हैं आश्रयरूप श्रीललिता विशाखादि सखी सहचरी मंजरी विशेष करके अपनी यूथेश्वरी श्रीरंगदेवीजी तिनको वर्णन है चरण[३] दोमें शब्दायमान नूपुर हंसी की चाल चंचल

---

(१)-अथ षोडशशृङ्गाराः-स्नाता नासाग्रजाग्रन्मणिरसितपटा सूत्रिणी बद्धवेणी सोत्तंसा चर्चिताङ्गी कुसुमितचिकुरा स्रग्विणी पद्महस्ता। ताम्बूलास्योरुविन्दुः स्तवकितचिकुरा कज्जलाक्षी सचित्रा राधालक्तोज्ज्वलाङ्घ्रिः स्फुरति तिलकिनी षोडशाकल्पिनीयम् ॥

(२)-अथ द्वादश भूषणानि-दिव्यश्चूडामणीन्द्रः पुरटविरचितो कुण्डलद्वन्द्वकाञ्ची ष्काश्चक्री शलाकायुगवलयघटाकण्ठभूषोर्मिकाश्च। हारास्तारानुकारा भुजकटकतुलाकटयो रत्नक्लृप्तास्तुङ्गा पादाङ्गुलीयच्छविरति रविभिर्भूषिता भाति राधा ॥

(३)-श्रीरंगदेवीस्वरूपम्-सिञ्जन्नूपुरपादपद्मयुगलां हंसीगतिं बिभ्रतीं चञ्चत्खञ्जनमञ्जुलोचनयुगां पीनोल्लसत्कन्धराम्। शुभ्रत्काञ्चनकङ्कणद्युतिमिलत्पाणौ चलच्चामरं कुर्वाणां हरिराधिकोपरि सदा श्रीरङ्गदेवीं भजे ॥

मनोहर खंजन से दोनों नेत्र पुष्ट कंधा स्वच्छ कंचन के कंकण तिनकी कांति हाथ से मिलती भई ता हाथ में चमर श्रीराधा कृष्ण पर कर रही ऐसी श्रीरंगदेवी को मैं भजन करौं! जिनके दर्शन से श्रीराधाको स्मरण हो जाय वे उद्दीपन जैसे अलंकार—मधुमती वीणा तडित् सुवर्ण, धाम-श्रीवरषानु राधाकुंडादि, लीला—रास मान हिंडोला होरी सांझी इत्यादि. श्रीराधाके प्रेम में श्रीकृष्ण और भक्त नृत्य गीत लोटन तन मोटन आदि करैं सो अनुभाव हैं ये भाव को बोधन करावैं हैं, यथा गीतगोविन्दे—

राधावदनविलोकनविकासितविविधविकारविभङ्गम् ।
जलनिधिमिव विधुमण्डलदर्शनतरलिततुङ्गतरङ्गम् ॥

अर्थ—जैसे गीतगोविन्द में श्रीराधा मुख दर्शन से श्रीकृष्ण को नाना प्रकार के विकार खिलते भये जैसे समुद्र की पूर्णचन्द्र मण्डलदेखके लहरें ऊंची होय हैं ।

लालास्राव यथा तंत्रे—बदतः कृष्णराधांगसौन्दर्या
माधुरीरसं भावाक्रांतहृदयस्य लालास्राव वक्रतः ।

अर्थ—लालास्राव अर्थात् श्रीकृष्ण महाराज श्रीराधा के अंगकी माधुरी को रस जो कहबे लगे तो भाव से हृदय दब गयो मुखसे लालस्राव होबे लग्यो जो चित्त को क्षोभ करावै वे सात्विक जैसे स्तंभ स्वेद रोमांच वेपथु स्वरभंग वैवर्ण्य अश्रु पुलका ये आठ हैं ।

यथा गीतगोविन्दे—

सा मां द्रक्ष्यति वक्ष्यतिस्म च कथां प्रत्यङ्गमालिङ्गनैः ।

प्रीतिं यास्यति रंस्यते सखि समागत्येति संचिन्तयन् ॥
स त्वां पश्यति वेपते पुलकयत्यानन्दति स्विद्यति ।
प्रत्युद्गच्छति मूर्च्छति स्थिरतमः पुञ्जे निकुञ्जे प्रियः ॥

अर्थ–जैसे गीतगोविन्द में सखी श्रीराधा से बोली कि कृष्ण तुमको चिंतवन करें हैं कि प्यारी मोकों देखेंगी कामकथा करेंगी प्रत्यंग आलिंगन करबे से प्रीति को प्राप्त होयगी और आयके रमण करेंगी ऐसे चिन्ता में भरे तुम्हारो दर्शन ध्यान में करें हैं कम्पायमान होय हैं पुलकित होय हैं आनन्दित होय हैं खेदयुक्त होय हैं उठ ठाढे होय हैं मूर्च्छित होय हैं महा अन्धेरी कुंजमें या रीति से व्याकुल हैं ।

अन्यदपि तत्रैव–

प्रीतिं वस्तनुतां हरिः कुवलयापीडेन सार्द्धं रणे ।
राधापीनपयोधरस्मरणकृत्कुम्भेन सम्भेदवान् ॥
यत्र स्विद्यति मीलति क्षणमथ क्षिप्ते द्विपे तत्क्षणात् ।
कंसस्यास्माभिर्जितंजितमिति व्यामोहकोलाहलः ॥

अर्थ–गीतगोविन्द में कंसके कुवलिया पीड हाथी के साथ संग्राम में श्रीकृष्ण को वाको कुम्भ देख के श्रीराधा के पीन पयोधर की याद आय गई तो पसीना हो आयो नेत्र मून्द लिये ता समय कंस के पक्षवारिन को जीतो जीतो यह कोलाहल होतो भयो जब हाथी मार दियो तब शोक को कोलाहल होत भयो सो कृष्ण तुम पर प्रीति विस्तार करो ।

व्यभिचारी यथा तत्रे–

भ्रुवौ क्षिपन्नङ्गुलिके च चालयन् विमर्शपूर्वं सुबलो व्यतर्कयत् । अयं हरिर्वक्ति न मे समार्थितो न वेक्षते नर्मरसार्द्रया दृशा ॥

राधाधरास्वादमदौघसंप्लुतो नत्वन्यथेयं विकृतिर्विभाव्यते ।

अर्थ—व्यभिचारी यथा तंत्र में तर्क यथा बिचार—भौंह क्षेपन करके अंगुली चलाय के बिचारपूर्वक सुबल तर्कना करतो भयो कि मैं प्रार्थना भी करों तब भी ये श्रीकृष्ण न मो से बोलें न नर्मरस की गीली दृष्टि से मोकों देखें मैं जानूं हूं कि राधा के अधर आस्वाद को जो मद तामें डूबे हैं और रीति से ऐसो विकार नहीं होय । ऐसें व्यभिचारी के निर्वेद हर्षगर्वादिक भी समझलेने ।

॥ दोहा ॥

श्रीहरिव्यासी पदकमल, दृढ हिरदय में धार ।
गुरु की कृपा मनाय के, कियो अर्थ विस्तार ॥
सब रसिकन की हाट से, कणा कणा चुनलाय ।
हंसदास अहमित भयो, निज दूकान लगाय ॥
श्रीराधाको यश कहों, लाख भांत अभिलाष ।
उलटो सीधो जो बन्यो, हंसदास दियो भाष ॥
नहिं विद्या नहिं चतुरई, नहिं कविता की वास ।
क्षमहिं ढिठाई रसिक जन, जान आपनो दास ॥

इति श्रीहंसदास संगृहीत,
राधारहस्य प्रकाशिका,
श्रीवृषभानपुर, बिलास गढस्थान ।

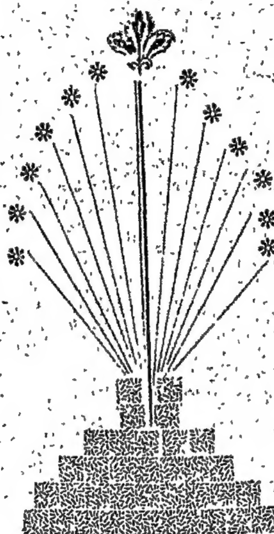
॥ शुद्धाशुद्धि पत्र ॥

पृष्ठको अंक	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१	७ (संस्कृत भाषा)	मत्तेन हंदासन	मत्तेन हंसदासेन
२२	टिप्पनी श्लोक २	सोपि	सापि
२४	१९	बुद्धवार	सोमवार
२५	१८	गभवान	भगवान
२८	टिप्पनी में श्लोक रहिगया		

वेणुः करान्निपतितं स्खलितं शिखण्डे भ्रष्टं च पीतवसनं पुरुषस्य तस्य ।
यस्याःकटाक्षशरमूर्च्छितनन्दसूनोः तं राधिकाचरणरेणुमहं स्मरामि ॥

३७	२६	ग्रान	गान
	२८	वर्तयेन्	नर्तयेत्
	२९	वल्लमा	वल्लभा
३९	२	विस्तासे	विस्तारे
	९	रमा	इमा
	१६	पद्याम्बर	पट्टाम्बर
४१	९	जन्मनीयषी	जन्मनीयुषी
	१०	रंकवालया	रंकमालया
	११	ध्यया	ध्येया
४२	५	चिन्तवन	चितवन
४५	४	गोकुलं	गोकुले
४८	३	गोपेषु गोपेषु	गोषु
७४	टिप्पनी २ श्लोक	ष्काश्वक्री	निष्काश्वक्री
७५	२२(संस्कृत भाषा)	यथा गीतगोविन्दे	सात्विक यथा गीतगोविन्दे
७७	९ दोहोंके ऊपर रहिगया		मधुरभावोल्लासरतिस्थायी है

॥ श्रीः ॥



जैनप्रेस जयपुर.

